सारग्राहिता

प्रथम पुष्प

एक दया कौ रह्यौ भरोसो ।
सब विधि भयो निराश राधिके,
दीन और को मोसो ॥

प्रकाशक
श्री मान मन्दिर सेवा संस्थान
गहवर वन, बरसाना, मथुरा
उत्तर प्रदेश २८१ ४०५
भारतवर्ष

अंतर्वस्तु

प्रकाशकीय

शरणागतवत्सल जगदाराध्य श्रीहरि ही जीव के सच्चे हितैषी व एकमात्र अवलम्ब हैं, उनकी शरण यदि मिल जाए तो इससे बड़ा सौभाग्य कुछ नहीं हो सकता। अनन्त वासनाओं में ग्रसित प्राणी वासनाओं से कभी तृप्त तो हो ही नहीं सकते, उल्टे अनन्त अन्धकार को ही प्राप्त हो जाते हैं। संसार में जीवों के परम कल्याण का कोई साधन नहीं है। सूर, तुलसी, मीरा आदि बड़े-बड़े महापुरुषों का क्रियात्मक-जीवन देखकर भी जीव संसार में ही आश्रय खोजता है। समुद्र में डूबने वाले को एक तृण का अवलम्ब जैसे होता है, वैसे ही ब्रजभूमि में सम्भवतया सारे जगत के कष्ट-हरण के लिए ऐसे एक विरक्त संत का अवतरण हुआ, जो सहज में ही अपने आश्रितों को भवसागर पार करा देंगे। विभिन्न प्रदेशों से आकर शरणागत हुये आराधक-आराधिकाओं में दिव्यगुणों का समावेश अपने सत्संग के माध्यम से कराने वाले उन **विरक्त संत श्री रमेश बाबा जी महाराज** की महती अनुकम्पा से उस सत्संग की रसधारा में समस्त अध्यात्म रसावलम्बी अवगाहन करें। रात्रि-नृत्याराधन के पश्चात् पूज्य बाबा महाराज द्वारा साधक-साधिकाओं को दी गई ज्ञातव्य भक्ति-सिद्धान्तों की शिक्षा परमार्थ-पथानुयायियों के लिए सम्बल-स्वरुप है। इसी आशय से "**सारग्राहिता**" नामक इस पुस्तक में उन **अमृत-बिन्दुओं** को लिपिबद्ध किया है, जिसका अध्ययन सभी सुधी-साधकों को अतिशय सुखद होगा।

श्री रमेश बाबा जी महाराज

गुण-गरिमागार, करुणा-पारावार, युगललब्ध-साकार इन विभूति विशेष गुरुप्रवर पूज्य बाबाश्री के विलक्षण विभा-वैभव के वर्णन का आद्यन्त कहाँ से हो यह विचार कर मंद मति की गति विथकित हो जाती है।

विधि हरि हर कवि कोविद बानी । कहत साधु महिमा सकुचानी ॥
सो मो सन कहि जात न कैसे । साक बनिक मनि गुन गन जैसे ॥

(रा.च.मा.बाल. ३)

पुनरपि

जो सुख होत गोपालहि गाये ।
सो सुख होत न जप तप कीन्हे कोटिक तीरथ न्हाये ।

(सू. वि. प.)

अथवा

रस सागर गोविन्द नाम है रसना जो तू गाये ।
तो जड़ जीव जनम की तेरी बिगड़ी ह्व बन जाये ॥
जनम-जनम की जाये मलिनता उज्ज्वलता आ जाये ॥

(बाबा श्री द्वारा रचित - ब्र. भा. मा.से संग्रहीत)

कथनाशय इस पवित्र चरित्र के लेखन से निज कर व गिरा पवित्र करने का स्वसुख व जनहित का ही प्रयास है।

अध्येतागण अवगत हों इस बात से कि यह लेख, मात्र सांकेतिक परिचय ही दे पायेगा, अशेष श्रद्धास्पद (बाबाश्री) के विषय में। सर्वगुणसमन्वित इन दिव्य विभूति का प्रकर्ष आर्ष जीवन चरित्र कहीं लेखन-कथन का विषय है?

"करनी करुणासिन्धु की मुख कहत न आवै"

(सू.वि. प.)

मलिन अन्तस् में सिद्ध संतों के वास्तविक वृत्त को यथार्थ रूप से समझने की क्षमता ही कहाँ, फिर लेखन की बात तो अतीव दूर है तथापि इन लोक-लोकान्तरोत्तर विभूति के चरितामृत की श्रवणाभिलाषा ने असंख्यों के मन को निकेतन कर लिया अतएव सार्वभौम महत् वृत्त को शब्दबद्ध करने की धृष्टता की।

तीर्थराज प्रयाग को जिन्होंने जन्मभूमि बनने का सौभाग्य-दान दिया। माता-पिता के एकमात्र पुत्र होने से उनके विशेष वात्सल्यभाजन रहे। ईश्वरीययोजना ही मूल हेतु रही आपके अवतरण में। दीर्घकाल तक अवतरित दिव्य दम्पति स्वनामधन्य श्री बलदेव प्रसाद शुक्ल (शुक्ल भगवान् जिन्हें लोग कहते थे) एवं श्रीमती हेमेश्वरी देवी को संतान सुख अप्राप्य रहा, संतान प्राप्ति की इच्छा से कोलकाता के समीप तारकेश्वर में जाकर आर्त पुकार की, परिणामतः सन् १९३० पौष मास की सप्तमी को रात्रि ९:२७ बजे कन्यारत्न श्री तारकेश्वरी (दीदी जी) का अवतरण हुआ अनन्तर दम्पत्ति को पुत्र कामना ने व्यथित किया। पुत्र प्राप्ति की इच्छा से कठिन यात्रा कर रामेश्वर पहुँचे, वहाँ जलान्न त्याग कर शिवाराधन में तल्लीन हो गये, पुत्र कामेष्टि महायज्ञ किया। आशुतोष हैं रामेश्वर प्रभु, उस तीव्राराधन से प्रसन्न हो तृतीय रात्रि को माता जी को सर्वजगन्निवासावास होने का वर दिया। शिवाराधन से सन् १९३८ पौष मास कृष्ण पक्ष की सप्तमी तिथि को अभिजित मुहूर्त मध्याह्न १२ बजे अद्भुत बालक का ललाट

देखते ही पिता (विश्व के प्रख्यात व प्रकाण्ड ज्योतिषाचार्य) ने कह दिया –

“यह बालक गृहस्थ ग्रहण न कर नैष्ठिक ब्रह्मचारी ही रहेगा, इसका प्रादुर्भाव जीव-जगत के निस्तार निमित्त ही हुआ है।”

वही हुआ, गुरु-शिष्य परिपाटी का निर्वाहन करते हुए शिक्षाध्ययन को तो गये किन्तु बहु अल्प काल में अध्ययन समापन भी हो गया।

“अल्पकाल विद्या बहु पायी”

गुरुजनों को गुरु बनने का श्रेय ही देना था अपने अध्ययन से। सर्वक्षेत्र कुशल इस प्रतिभा ने अपने गायन-वादन आदि ललित कलाओं से विस्मयान्वित कर दिया बड़े-बड़े संगीतमार्तण्डों को। प्रयागराज को भी स्वल्पकाल ही यह सानिध्य सुलभ हो सका “तीर्थी कुर्वन्ति तीर्थानि" ऐसे अचिन्त्य शक्ति सम्पन्न असामान्य पुरुष का। अवतरणोद्देश्य की पूर्ति हेतु दो बार भागे जन्मभूमि छोड़कर ब्रजदेश की ओर किन्तु माँ की पकड़ अधिक मजबूत होने से सफल न हो सके। अब यह तृतीय प्रयास था, इन्द्रियातीत स्तर पर एक ऐसी प्रक्रिया सक्रिय हुई कि तृणतोड़नवत् एक झटके में सर्वत्याग कर पुनः गति अविराम हो गई ब्रज की ओर।

चित्रकूट के निर्जन अरण्यों में प्राण-परवाह का परित्याग कर परिभ्रमण किया, सूर्यवंशमणि प्रभु श्रीराम का यह वनवास स्थल पूज्यपाद का भी वनवास स्थान रहा। “स रक्षिता रक्षति यो हि गर्भे” इस भावना से निर्भीक घूमे उन हिंसक जीवों के आतंक संभावित भयानक वनों में।

आराध्य के दर्शन को तृषान्वित नयन, उपास्य को पाने के लिए लालसान्वित हृदय अब बार-बार पाद-पद्मों को श्रीधाम बरसाने के लिए ढकेलने लगा, बस पहुँच गए बरसाना। मार्ग में अन्तस् को झकझोर देने वाली अनेकानेक विलक्षण स्थितियों का सामना किया। मार्ग का असाधारण घटना संघटित वृत्त यद्यपि अत्यधिक रोचक, प्रेरक व पुष्कल है तथापि इस दिव्य जीवन की चर्चा स्वतन्त्र रूप से भिन्न ग्रन्थ के निर्माण में ही सम्भव है अतः यहाँ तो संक्षिप्त चर्चा ही है। बरसाने में आकर तन-मन-नयन आध्यात्मिक मार्गदर्शक के अन्वेषण में तत्पर हो गए। श्रीजी ने सहयोग किया एवं निरंतर राधारससुधा सिन्धु में अवस्थित, राधा के परिधान में सुरक्षित, गौरवर्णा की शुभ्रोज्ज्वल कान्ति से आलोकित-अलंकृत युगल सौख्य में आलोडित, नाना पुराणनिगमागम के ज्ञाता, महावाणी जैसे निगूढ़ात्मक ग्रन्थ के प्राकट्यकर्ता “अनन्त श्री सम्पन्न श्री श्री प्रियाशरण जी महाराज” से शिष्यत्व स्वीकार किया।

ब्रज में भामिनी का जन्म स्थान बरसाना, बरसाने में भामिनी की निज कर निर्मित गहवर वाटिका “बीस कोस वृन्दाविपिन पुर वृषभानु उदार, तामें गहवर वाटिका जामें नित्य विहार” और उस गहवरवन में भी महासदाशया मानिनी का मन-भावन मान-स्थान श्री मानमंदिर ही मानद (बाबाश्री) को मनोनुकूल लगा। मानगढ़, ब्रह्माचलपर्वत की चार शिखरों में से एक महान शिखर है। उस समय तो यह बीहड़ स्थान दिन में भी अपनी विकरालता के कारण किसी को मंदिर प्रांगण में न आने देता। मंदिर का आंतरिक मूल स्थान चोरों को चोरी का माल छिपाने के लिए था।

चौराग्रगण्य की उपासना में इन विभूति को भला चोरों से क्या भय?

भय को भगाकर भावना की – “तस्कराणां पतये नमः” – चोरों के सरदार को प्रणाम है, पाप-पंक के चोर को भी एवं रकम-बैंक के चोर को भी। ब्रजवासी चोर भी पूज्य हैं हमारे, इस भावना से भावित हो द्रोहार्हणों (द्रोह के योग्य) को भी कभी द्रोहदृष्टि से न देखा, अद्वेष्टा के जीवन्त स्वरुप जो ठहरे। फिर तो शनैः-शनैः विभूति की विद्यमत्ता ने स्थल को जाग्रत कर दिया, अध्यात्म की दिव्य सुवास से परिव्याप्त कर दिया।

जग-हित-निरत इस दिव्य जीवन ने असंख्यों को आत्मोन्नति के पथ पर आरूढ़ कर दिया एवं कर रहे हैं। श्रीमन् चैतन्यदेव के पश्चात् कलिमलदलनार्थ नामामृत की नदियाँ बहाने वाली एकमात्र विभूति के सतत् प्रयास से आज ३२ हजार गाँवों में, प्रभातफेरी के माध्यम से नाम निनादित हो रहा है। ब्रज के कृष्ण लीला सम्बंधित दिव्य वन, सरोवर, पर्वतों को सुरक्षित करने के साथ-साथ सहस्रों वृक्ष लगाकर सुसज्जित भी किया। अधिक पुरानी बात नहीं है, आपको स्मरण करा दें, सन् २००९ में “राधारानी ब्रजयात्रा” के दौरान ब्रजयात्रियों को साथ लेकर स्वयं ही बैठ गये आमरण अनशन पर, इस संकल्प के साथ कि जब तक ब्रज पर्वतों पर हो रहे खनन द्वारा आघात को सरकार रोक नहीं देगी, मुख में जल भी नहीं जायेगा। समस्त ब्रजयात्री भी निष्ठापूर्वक अनशन लिए हुए हरिनामसंकीर्तन करने लगे और उस समय जो उद्दाम गति से नृत्य-गान हुआ, नाम के प्रति इस अटूट आस्था का ही परिणाम था कि १२ घंटे बाद ही विजयपत्र आ

गया। दिव्य विभूति के अपूर्व तेज से साम्राज्य सत्ता भी नत हो गयी। गौवंश के रक्षार्थ गत् ६ वर्ष पूर्व माता जी गौशाला का बीजारोपण किया था, देखते ही देखते आज उस वट बीज ने विशाल तरु का रूप ले लिया, जिसके आतपत्र (छाया) में आज 35,000 गायों का मातृवत् पालन हो रहा है। संग्रह परिग्रह से सर्वथा परे रहने वाले इन महापुरुष की भगवन्नाम ही एकमात्र सरस सम्पत्ति है।

यही करुणा करना करुणामयी मम अंत होय बरसाने में ।
पावन गह्वरवन कुञ्ज निकट रज में रज होय मिलूँ ब्रज में ॥

(बाबा श्री द्वारा रचित – ब्र.भा.मा. से संग्रहीत)

परम विरक्त होते हुए भी बड़े-बड़े कार्य संपादित किये, इन ब्रज संस्कृति के एकमात्र संरक्षक, प्रवर्द्धक व उद्धारक ने, गत षष्टि (६०) वर्षों से ब्रज में क्षेत्रसन्यास (ब्रज के बाहर न जाने का प्रण) लिया एवं इस सुदृढ़ भावना से विराज रहे हैं। ब्रज, ब्रजेश व ब्रजवासी ही आपका सर्वस्व हैं। असंख्यों आपके सान्निध्य-सौभाग्य से सुरभित हुये, आपके विषय में जिनके विशेष अनुभव हैं, विलक्षण अनुभूतियाँ हैं, विविध विचार हैं, विपुल भाव साम्राज्य है, विशद अनुशीलन हैं, इस लोकोत्तर व्यक्तित्व ने विमुग्ध कर दिया है विवेकियों का हृदय। वस्तुतः कृष्णकृपालब्ध पुमान् को ही गम्य हो सकता है यह व्यक्तित्व। रसोदधि के जिस अतल-तल में आपका सहज प्रवेश है, यह अतिशयोक्ति नहीं कि रस ज्ञाताओं का हृदय भी उस तल से अस्पृष्ट ही रह गया।

आपकी आंतरिक स्थिति क्या है, यह बाहर की सहजता, सरलता को देखते हुए सर्वथा अगम्य है। आपका अन्तरंग

लीलानंद, सुगुप्त भावोत्थान, युगल मिलन का सौख्य इन गहन भाव-दशाओं का अनुमान आपके सृजित साहित्य के पठन से ही संभव है। आपकी अनुपम कृतियाँ – श्री रसिया रासेश्वरी, स्वर वंशी के शब्द नूपुर के, ब्रजभावमालिका, भक्तद्वय चरित्र इत्यादि हृदयद्रावी भावों से भावित कृतियाँ हैं।

आपका त्रैकालिक सत्संग अनवरत चलता ही रहता है। साधक-साधु-सिद्ध सबके लिए सम्बल हैं आपके त्रैकालिक रसार्द्रवचन। दैन्य की सुरभि से सुवासित अद्भुत असमोर्ध्व रस का प्रोज्ज्वल पुंज है यह दिव्य रहनी, जो अनेकानेक पावन आध्यात्मास्वाद के लोभी मधुपों का आकर्षण केंद्र बन गयी। सैकड़ों ने छोड़ दिए घर-द्वार और अद्यावधि शरणागत हैं। ऐसा महिमान्वित-सौरभान्वित वृत्त विस्मयान्वित कर देने वाला स्वाभाविक है।

रस-सिद्ध-संतों की परम्परा इस ब्रजभूमि पर कभी विच्छिन्न नहीं हो पायी। श्रीजी की यह गह्वर वाटिका जो कभी पुष्पविहीन नहीं होती, शीत हो या ग्रीष्म, पतझड़ हो या पावस, एक न एक पुष्प तो आराध्य के आराधन हेतु प्रस्फुटित ही रहता है। आज भी इस अजरामर, सुन्दरतम, शुचितम, महत्तम, पुष्प (बाबाश्री) का जग स्वस्तिवाचन कर रहा है। आपके अपरिसीम उपकारों के लिए हमारा अनवरत वंदन, अनुक्षण प्रणति भी न्यून है।

प्रार्थना है अवतरित प्रीति-प्रतिमा विभूति से कि निज पादाम्बुजों का अनुगमन करने की शक्ति हम सबको प्रदान करें।

आपकी प्रेम प्रदायिका, परम पुनीता पद-रज-कणिका को पुनः-पुनः प्रणाम है।

बाबाश्री महाराज का विगत कई वर्षों का सत्संग आप http://satsang.maanmandir.org पर सुन सकते हैं। सत्संग द्वारा अपने जीवन के बचे हुए वर्षों का सदुपयोग भगवद् प्राप्ति में कर सकते हैं। सत्संग का आत्मसात् होना बिना भगवद् कृपा के संभव नहीं हैं। अनन्त जन्मों के संचित पाप सत्संग सुनने में बाधा पहुँचाते हैं परन्तु महापुरुषों की वाणी का एक शब्द ही अनन्त पापों को काटने में समर्थ है, बस जरुरत है श्रद्धा एवं निष्ठा की।

हिमालय की कंदराओं में व जंगलों में महापुरुषों को खोजने की जरूरत नहीं है, बस जरुरत है तो सिर्फ इस ज्ञान को प्राप्त करने की – जो बाबाश्री द्वारा सत्संग के माध्यम से सुलभता पूर्वक उपलब्ध है। जरा सी कोशिश करके तो देखिये, और जब आप कुछ समय बाद अपने अतीत में झाँकेंगे तब यह अहसास होगा – "अरे ! मेरा जीवन किस अन्धकार की ओर जा रहा था।"

समय-समय पर भगवान् अपने परिकरों को, निरपेक्ष संतो के रूप में इस धरा पर प्राणियों में भक्ति संचार के लिये भेजते हैं – "बाबाश्री के सत्संग का रस - लूट सको तो लूट लो !" बहुत ही सहज एवं सरल मार्ग है परन्तु बिना कृपा के सम्भव नहीं है। उन निरपेक्ष संतो के पास जाओ जो इस कृपा को मुफ्त में लुटाते हैं।

【1】

जिसने भगवान् को पकड़ लिया वह अनाथ नहीं है; अनाथ वह है जो पैसे को पकड़ता है, संसार को पकड़ता है। पैसे को वही पकड़ता है, जो भिखमंगा है, दरिद्र है, जिसके अन्दर सांसारिक इच्छाएँ हैं, जिसको भगवान् पर विश्वास नहीं है। मीराबाई ने कहा था –

पायो जी म्हे तो राम रतन धन पायो।
बस्तु अमोलक दी म्हारे सतगुरु, किरपा कर अपनायो॥
जनम जनमकी पूँजी पाई, जगमें सभी खोवायो।
खरचै नहिं कोई चोर न लेवै, दिन-दिन बढ़त सवायो॥
सतकी नाव खेवटिया सतगुरु, भवसागर तर आयो।
मीराके प्रभु गिरधर नागर, हरख हरख जस गायो॥

सच्चा धन भगवान् हैं। भगवान् को छोड़कर जो पैसे को पकड़े, वह भक्त नहीं है।

देखो, हम अपनी तारीफ नहीं कर रहे, तुम लोगों को विश्वास दिलाने के लिए कुछ बातें बता रहे हैं – आजतक हमने दो पैसा भी अपने पास नहीं रखा, हम जैसा गरीब आदमी दुनिया में कोई नहीं होगा लेकिन फिर भी यहाँ (मान मंदिर) से धाम-सेवा एवं जन कल्याण के इतने कार्य हुए, जो अन्य द्वारा दुष्कर ही हैं।

जब हम ब्रज में आये थे तो उस समय पेड़ों के नीचे रहते थे, कुटिया भी नहीं थी और आज सारे ब्रज में सबसे बड़ा आश्रम मान मंदिर है, जहाँ सैकड़ों लोग भक्ति करते हैं।

बहुत से लोग आते हैं और हमसे पूछते हैं कि जो लोग भक्ति करते हैं, पढ़ते-लिखते नहीं हैं, कल को ये क्या खायेंगे?

ऐसे नासमझ, बुद्धिहीन लोग आते हैं, जो संसारी पढ़ाई को ही पढ़ाई समझते हैं। वे यह नहीं जानते कि भगवान् की भक्ति से बढ़कर कोई पढ़ाई नहीं है। इसलिए मनुष्य को विश्वास से भक्ति करनी चाहिए कि दुनिया में सबसे ऊँची पढ़ाई यही है भगवान् की भक्ति की।

अरे, भगवान् तो चोर-डाकुओं को भी रोटी देता है, वह विश्वम्भर है, क्या भक्ति करने वालों को नहीं देगा? इसलिए भक्त को योगक्षेम की चिंता नहीं करनी चाहिए।

भोजनाच्छादने चिन्तां वृथा कुर्वन्ति वैष्णवाः।
योऽसौ विश्वम्भरो देवः स किं भक्तानुपेक्षते॥

【2】

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥

(गी. ९/२२)

गीता में भगवान् ने कहा है – तू अनन्य भाव से मेरा चिन्तन कर, तेरा योग-क्षेम मैं धारण करूँगा। इस श्लोक का प्रमाण है सारा महाभारत। विभिन्न विषम परिस्थितियों में भगवान् ने पाण्डवों की रक्षा की। पाण्डवों के सारे जीवन का प्रमाण है यह श्लोक। जैसे एक दो उदाहरण बता देते हैं – जब भीष्म ने प्रतिज्ञा की थी कि मैं इन पाँच बाणों से पाण्डवों का वध करूँगा, उस समय श्रीकृष्ण ने पाण्डवों की रक्षा की। जब कर्ण ने नारायणास्त्र का पांडवों के ऊपर संधान किया तब प्रभु ने उनकी रक्षा की, जब भीम ने छल से दुर्योधन को मारा, बलराम जी ने जब ये देखा तो क्रोध में आ गए और भीम को मारने दौड़े, तब श्रीकृष्ण ने उनकी रक्षा की, उत्तरा के गर्भ पर अश्वत्थामा ने ब्रह्मास्त्र छोड़ा, भगवान् ने उत्तरा के गर्भ की

रक्षा की। इसी तरह अनेकों जगहों पर श्रीकृष्ण ने पाण्डवों का योग-क्षेम वहन किया। क्यों किया? क्योंकि वे अनन्य चिंतन करते थे और यही सच्ची अनन्यता है।

【3】

देखो, भगवान् से मिलने के लिए बहुत से लोग कोशिश करते हैं, लाखों वर्ष तपस्या करते हैं लेकिन फिर भी अनुभव नहीं होता। सूरदास जी ने कहा है –

जौ लौं मन कामना न छूटै।
तौ कहा जोग-जज्ञ ब्रत कीन्हैं, बिनु कन तुस कौं कूटै॥
कहा सनान किय तीरथ के, अंग भस्म, जट-जूटै।
कहा पुरान जु पढ़ैं अठारह, उर्ध्व धूम के घूटैं॥
जग सोभा, की सकल बड़ाई, इन तैं कछू न खूटै।
करनी और, कहै कछु औरै, मन दसहूँ दिसि टूटै॥
काम क्रोध, मद, लोभ, सत्रु हैं, जो इतननि सौं छूटै।
सूरदास तबहीं तम नासैं, ज्ञान-अगिनि-झर फूटै॥

(सूर वि.प. २९६)

जब तक हमारे मन में कामनाएँ हैं संसार की, विषय-भोगों की, तब तक कुछ नहीं होगा; चाहे यज्ञ कर लो, योग कर लो, व्रत कर लो। जैसे भूसा कूटते रहो, उसमें दाना है ही नहीं, फिर कहाँ से निकलेगा? ऐसे ही जब तक संसारी कामनाएँ हैं, स्वप्न में भी भगवान् नहीं मिलेंगे। कोई कुम्भ मेला नहाने जाता है, कोई तीर्थयात्रा में जाता है, इससे कुछ नहीं होगा। कोई भस्म लगाता है, जटा बढ़ाता है, अठारहों पुराणों को पढ़ता है लेकिन मन में संसारी कामनाएँ हैं, तो भगवान् कैसे मिलेंगे?

शुक्राचार्य जी ने तप किया था उल्टे टंगकर के, नीचे से धुँआ आ रहा था, वह उसको हजारों वर्ष तक पीते रहे, तब उन्होंने देवगुरु बृहस्पति से भी ज्यादा सिद्धि प्राप्त की; परन्तु भगवान् नहीं मिले क्योंकि मन में कामना थी।

ज्यादातर संसार में लोग नाम चाहते हैं, यश चाहते हैं, मान-प्रतिष्ठा चाहते हैं। साधु बन गए, विद्वान् बन गए, कथावाचक बन गए, बड़े लम्बे-चौड़े भाषण देते हैं परन्तु कथनी और करनी अलग-अलग है। कहते हैं **'मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरो न कोई'** परन्तु करनी बिल्कुल विपरीत है। जब काम, क्रोध, लोभ, मोहादि इन शत्रुओं से छूट जाओगे, हृदय का अन्धकार दूर हो जाएगा, तब कृष्ण प्रेम का झरना बहेगा।

जैसे मीराबाई के हृदय में प्रेम का झरना बहता था क्योंकि उनके मन में कामना नहीं थी, वह शरीर निर्वाह के लिए भी कामना नहीं करती थीं।

जो पहिरावै सोई पहिरूँ, जो दे दे सोई खाऊँ।
मेरी उणकी प्रीति पुराणी उण बिन पल न रहाऊँ॥
जहाँ बैठावें तितही बैठूँ, बेचै तो बिक जाऊँ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर बार-बार बलि जाऊँ॥

जिस परिस्थिति में प्रभु रखें उसी में सन्तुष्ट रहो, यही सच्ची भक्ति है। थोड़े से अपमान में उदास हो गए, थोड़े से सम्मान में प्रसन्न हो गए, ये कोई भक्ति नहीं है। इन दोनों (मान-अपमान) को पटककर मार डालो, तब श्रीकृष्ण की गलियों में घूमोगे।

【4】

जब तक थोड़ा भी सहारा दुनिया का रहता है, तब तक राधा-कृष्ण की प्राप्ति नहीं होती है। बिल्कुल भूल जाओ, कौन माँ? कौन बाप? कौन बहन? कौन भाई? उसी को सर्वभाव की शरणागति कहते हैं।

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि शाश्वतम्॥

(गी. १८/६२)

भगवान् ने गीता में कहा – अर्जुन! तू सर्वभाव से शरण में जा, तब तुझे शाश्वत शान्ति मिलेगी।

न किसी साधन का भरोसा, न किसी सगे-सम्बन्धी का भरोसा, तब श्रीकृष्ण का भरोसा मिलेगा।

इसलिए भूल जाओ कि संसार में कोई है हमारा, भूल जाओ कि संसार में कोई हमको सहायता देगा, भूल जाओ कि हम बीमार पड़ेंगे तो कोई हमारी सहायता करेगा, सब कुछ भूल जाओ।

देखो, धृतराष्ट्र का विदुर ने उद्धार किया, नहीं तो वह अनन्त काल तक नरक भोगते।

विदुर ने धृतराष्ट्र से कहा –

अग्निर्निसृष्टो दत्तश्च गरो दाराश्च दूषिताः।
हृतं क्षेत्रं धनं येषां तद्दत्तैरसुभिः कियत्॥

(भा. १/१३/२३)

भईया, तुमने पाण्डवों को लाक्षाग्रह की अग्नि में जलाने का प्रयत्न किया, द्रौपदी को नग्न करने का प्रयत्न किया, जुए में छलपूर्वक पाण्डवों का तुमने सबकुछ उनका छीन लिया, सब धन-

सम्पत्ति ले ली, जंगल-जंगल वे भटकते रहे। क्या तुम्हारा कभी कल्याण हो सकता है?

विदुर जी की कठोर वाणी सुनकर धृतराष्ट्र का अज्ञान दूर हो गया, वे समझ गए कि हमको अनन्तकाल तक नरक भोगना पड़ेगा, उदास हो गये लेकिन विदुर जी ने कहा - तुम्हारा अब भी कल्याण हो सकता है। कैसे होगा? सब सहारे छोड़ दो, पाण्डवों का सहारा छोड़ दो, एकमात्र भगवान् के सहारे चले जाओ घर से।

गतस्वार्थमिमं देहं विरक्तो मुक्तबन्धनः ।
अविज्ञातगतिर्जह्यात् स वै धीर उदाहृतः ॥

(भा. १/१३/२५)

वहाँ शरीर छोड़ो जहाँ कोई पानी देने वाला भी न हो, कोई पूछने वाला न हो, कोई सेवा करने वाला नहीं हो, इसको 'अविज्ञात गति' कहते हैं। थोड़े से दिन बाकी हैं तुम्हारी जिन्दगी के, इतने में ही भगवान् मिल जाएँगे। तुम्हारे अनन्त पाप जल जाएँगे। सब सहारे छोड़ दो।

गान्धारी सुन रही थी, उसकी आँख में पट्टी बंधी थी, वह भी अंधी थी, समझ गई कि आज ये चले जाएँगे, आज ये छोड़ जाएँगे सबको। धृतराष्ट्र रात को उठे, अन्धे थे फिर भी चुपचाप चल पड़े। गान्धारी ने हाथ पकड़ लिया, कहाँ जा रहे हो? वह बोले – तुमने सुना नहीं, विदुर ने क्या कहा था?

'अविज्ञात गतिर्जह्यात्' वहाँ शरीर छोड़ो, जहाँ कोई पूछने वाला न हो।

मो मरने को नेम है, मरूँ तो प्रभु के द्वार।
कबहुँ तो प्रभु पूछिहैं, कौन मर्‌यो मेरे द्वार॥

गान्धारी बोलीं – यहाँ रहकर मैं क्या नरक भोगूँगी? जहाँ तुम मरोगे, वहाँ मैं भी मरूँगी।

उन्होंने कहा - चलो, ऐसा कहकर दोनों अन्धे-अंधी रात में निकल गए, कितनी ठोकरें पड़ी होंगी, कोई रास्ता दिखाने वाला नहीं, कोई साथ देने वाला नहीं, गड्ढे में गिर जायें तो उठाने वाला नहीं। इसको कहते हैं सर्वभाव की शरणागति।

धृतराष्ट्र का कल्याण हो गया, नहीं तो लाखों वर्ष नरक भोगते। सिर्फ इसी बात पर कल्याण हो गया कि हमको सब सहारे छोड़कर वहाँ जाकर मरना है जहाँ कोई पानी देने वाला न हो।

इसलिए जो लोग भक्ति करने चले हैं, वे भूल जावें कहाँ हमारा घर है, कौन हमारी माँ है? कौन हमारा बाप है? बस सब कुछ कृष्ण हैं, इतने से भव सागर पार हो जाओगे।

【5】

देखो, भगवान् ने कहा है कि मैं वैकुण्ठ में नहीं रहता हूँ, जो लाखों वर्ष समाधि लगाते हैं उन योगियों के हृदय में भी नहीं रहता हूँ। फिर कहाँ रहते हो? जहाँ हमारे भक्त गाते हैं, नाचते हैं, रिझाते हैं, मैं वहीं रहता हूँ।

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्तः यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद॥

भगवान् जब सामने रहते हैं तो दिखाई क्यों नहीं पड़ते?

त्वं सर्वलोकस्य सुहृत् प्रियेश्वरो
ह्यात्मा गुरुर्ज्ञानमभीष्टसिद्धिः ।
तथापि लोको न भवन्तमन्धधी-
र्जानाति सन्तं हृदि बद्धकामः ॥

(भा. ८/२४/५२)

भगवान् सब संसार के प्यारे हैं, सबसे प्यार करते हैं, ईश्वर हैं, सबकी आत्मा हैं, सबसे बड़े सुहृद हैं, ज्ञान हैं, अभीष्ट पदार्थ वही हैं, सिद्धि भी वे ही हैं, हमारी आत्मा हैं, जब सब कुछ हैं तो दिखाई क्यों नहीं पड़ते? इसलिए नहीं दिखाई पड़ते क्योंकि हम अन्धे हो गए हैं, हमारी बुद्धि अंधी हो गयी है। क्यों अन्धे हुए?

छोटी-छोटी इच्छाओं ने हमको अंधा बना दिया, इच्छाएँ हट जाएँ तो अभी भगवान् दिखाई पड़ेंगे।

जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु तुम्ह सन सहज सनेहु ।
बसहु निरंतर तासु मन सो राउर निज गेहु ॥

(रा.च.मा.अयो. १३१)

भगवान् से किसी भी वस्तु की चाह नहीं करो, भूखे हो तो रोटी की भी इच्छा नहीं करो, तो भगवान् अभी तुम्हारे हृदय-मंदिर में आकर घर बनाकर रहेंगे, कभी नहीं जाएँगे। मीराबाई के पास यही सिद्धि थी –

मैं गिरधरके घर जाऊँ ।
गिरधर म्हाँरो साँचो प्रीतम देखत रूप लुभाऊँ ॥
रैण पड़ै तबही उठ जाऊँ भोर भये उठि आऊँ ।
रैन दिना वाके सँग खेलूँ ज्यूँ त्यूँ ताहि रिझाऊँ ॥

उन्होंने कहा था - मैं रोज गिरिधर के साथ जाती हूँ, मैं रोज गिरिधर को देखती हूँ, हमारा प्यारा है, रात-दिन उसके साथ खेलती हूँ।

मीरा तुझको ऐसी सिद्धि कैसे मिली?

जो पहिरावै सोई पहिरूँ जो दे सोई खाऊँ।
मेरी उणकी प्रीति पुराणी उण बिन पल न रहाऊँ॥
जहाँ बैठावें तितही बैठूँ बेचै तो बिक जाऊँ।
मीराके प्रभु गिरधर नागर बार-बार बलि जाऊँ॥

हमलोग सोचते हैं मीठा मिल जाए, बर्फी मिल जाए, लड्डू मिल जाए; आज ये कपड़ा पहना है, कल नया कपड़ा मिल जाए, ये सब इच्छाएँ भक्ति को नष्ट करती हैं। इसलिए इच्छाओं को खत्म कर दो, अभी भगवान् दिखाई पड़ेंगे। छोटी-छोटी कामनाएँ भगवान् से अलग करती हैं। रुपया-पैसा चाहिए, कपड़ा चाहिए, मान-सम्मान चाहिए, ये सब इच्छाएँ भगवान् से दूर करती हैं।

जहाँ काम तहाँ राम नहिं, जहाँ राम नहिं काम।
तुलसी कहु कैसे रहें, रवि रजनी इक ठाम॥

सूर्य और रात्रि एक साथ रह सकते हैं क्या? नहीं। ऐसे ही जहाँ कामनाएँ हैं, वहाँ भगवान् नहीं हैं। यदि भगवान् को पाना है तो कामनाओं को छोड़ना पड़ेगा। अगर ये छोड़ दोगे तो भगवान् की नित्य कृपा मिलेगी।

【6】

यथा वस्तूनि पण्यानि हेमादीनि ततस्ततः।
पर्यटन्ति नरेष्वेवं जीवो योनिषु कर्तृषु॥

(भा. ६/१६/६)

जैसे बाजार में जो चीजें बिकती हैं - सोना-चाँदी आदि, इधर से उधर घूमती रहती हैं। आज जो सोना हमारे पास है, कल दूसरे के पास चला जायेगा। जो रूपया-पैसा आज हमारे पास है, थोड़ी देर में

दूसरे के पास चला जाएगा। जाने कितने हाथों में जाएगा। इसी तरह संसारी जितनी वस्तुएँ हैं, वे सब बदलती रहती हैं। आज यहाँ है, कल वहाँ है, परसों वहाँ है, वैसे ही इस जीव की स्थिति है।

नारद जी ने राजा चित्रकेतु को शिक्षा दी थी कि जो जीव आज किसी का बाप बना है, किसी का भाई बना है, वही कल किसी की माँ बनेगा, किसी की बेटी बनेगा।

हम लोग इस तरह से आज किसी के बेटे बने हैं, कल उसके बाप बन जायेंगे; किसी की माँ बने हैं, कल उसकी बेटी बन जायेंगे; बस यही संसार में हो रहा है। घूमती रहती है चीजें। ऐसे हर प्राणी जब तक उसमें देहाभिमान है, तब तक घूमता रहता है। आज किसी का बेटा बना, कल उसी का बाप बनेगा, इसीलिए संसार के सब सम्बन्ध अनित्य (झूठे) हैं, टिकाऊ नहीं हैं, बदलते रहते हैं, इसमें फँसना नहीं चाहिए।

केवल एकमात्र भगवान् को ही सम्बन्धी मानो, भगवान् ही प्रिय हैं, भगवान् ही माँ हैं, भगवान् ही पिता हैं, भगवान् ही पति हैं, भगवान् ही सखा हैं, सब सम्बन्ध भगवान् से मान लो, भगवान् ही सब कुछ हैं।

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बंधुश्च सखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव॥

【7】

जब तक मनुष्य कामनाओं का त्याग नहीं करता है, तब तक उसको ब्राह्मी स्थिति नहीं मिलती। कामनाएँ अनन्त हैं भोग की, खाने-पीने की, पहनने-ओढ़ने की, मान-सम्मान की, इनको जो छोड़

देता है, तब उसको ब्राह्मी स्थिति मिलती है। ब्राह्मी स्थिति अर्थात् भगवान् से मिल जाना।

विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः ।
निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति ॥

(गी. २/७१)

हम लोग ठग विद्या से भगवान् को नहीं पा सकते; वहाँ ढोंग-पाखण्ड नहीं चलता है। इस दुनिया में तो हम लोग ढोंग करते हैं, हमने कामनायें छोड़ दीं, सब कुछ छोड़ दिया। बस कहते ही कहते हैं। जब सब कामनायें सच में छूट जाएँगीं, तब ब्राह्मी स्थिति आएगी। इसके पहले ढोंग-ढांग करने से कुछ नहीं होगा। सूरदास जी ने एक पद में कहा है -

जौ लौं मन कामना न छूटै ।
तौ कहा जोग-जज्ञ ब्रत कीन्हैं, बिनु कन तुस कौं कूटै ॥
कहा सनान किय तीरथ के, अंग भस्म, जट-जूटै ।
कहा पुरान जु पढ़ैं अठारह, उर्ध्व धूम के घूटैं ॥
जग सोभा, की सकल बड़ाई, इन तैं कछू न खूटै ।
करनी और, कहै कछु औरै, मन दसहूँ दिसि टूटै ॥
काम क्रोध, मद, लोभ, सत्रु हैं, जो इतननि सौं छूटै ।
सूरदास तबहीं तम नासैं, ज्ञान-अगिनि-झर फूटै ॥

(सूर वि.प. २९६)

जब तक मन में कामनाएँ हैं, तब तक सारे काम बेकार हैं। जटा-जूट बढ़ा लिया, वेष बना लिया, तीर्थ में नहा लिया, 18 पुराण पढ़ लिये, इनसे कुछ नहीं होगा, बक-बक करने से हृदय का अन्धकार नहीं जाएगा। ये कामनाएँ अन्धकार हैं। हम लोग भाषण करते हैं, बक-बक करते हैं, उससे कुछ नहीं होता है। जैसे बिना कहे पानी का झरना फूटता है, वैसे ही जब समस्त कामनाएँ नष्ट हो जाएँगी, तब

हृदय में ज्ञान का झरना फूटेगा और अनन्तकाल के लिए हम आनन्द में डूब जायेंगे। भगवान् ने कहा - जब कामनाएँ चली जाएँगी, निःस्पृह, निरहं हो जाएगा, तब उसको अनन्त शान्ति मिलेगी।

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति ।
स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ॥

(गी. २/७२)

इस ब्राह्मी स्थिति को प्राप्त हो जाने पर फिर कभी भी मोह नहीं होगा और मरने के पहले ऐसा मन बन गया तो भगवान् की प्राप्ति हो गयी समझो। इसलिए ठोस बनो, खोखले नहीं। छोटी-छोटी कामनाओं को जड़ से मिटा दो।

【8】

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम् ।

(गी. ७/२८)

भगवान् ने कहा – अर्जुन! जिस व्यक्ति के पाप खत्म हो गए हैं पुण्य कर्म करते करते, वह दृढ़व्रत से मेरा भजन करता है। 'दृढ़व्रत' से तात्पर्य वह मर भी जाए, कहीं भी चला जाए, किसी भी योनि में जाए परन्तु उसका भजन नहीं टूटता है। मरते सभी हैं, हम लोग भी मरेंगे लेकिन दृढ़व्रती हो जाएँगे तो मौत हमारा कुछ नहीं कर पाएगी। भागवत् में देवकी माँ ने कहा है -

मर्त्यो मृत्युव्यालभीतः पलायन्
लोकान् सर्वान्निर्भयं नाध्यगच्छत् ।
त्वत्पादाब्जं प्राप्य यदृच्छयाद्य
स्वस्थः शेते मृत्युरस्मादपैति ॥

(भा. १०/३/२७)

जीव भाग रहा है और मृत्यु उसका पीछा कर रही है। हम लोग

खाते क्यों हैं? मर न जाएँ। कपड़े क्यों पहनते हैं? मर न जाएँ, मकान क्यों बनाते हैं? शरीर रक्षा के लिए। यह जीव हर समय भाग रहा है और काल रूपी सर्प इसका पीछा कर रहा है। जहाँ जिस योनि में जाता है, काल इसको खा जाता है, लेकिन जब यह भगवान् के चरणों को पकड़ लेता है, तब आराम से सोता है फिर इसको देखकर काल भागता है, मौत भागती है। इसलिए दृढ़व्रत से भगवान् की शरण पकड़ो फिर देखो काल भी तुम्हारा कुछ नहीं कर सकता।

【9】

ममता तू न गई मेरे मन तें ॥
पाके केस जनमके साथी, लाज गई लोकनतें।
तन थाके कर कंपन लागे, ज्योति गई नैननतें॥
सरवन बचन न सुनत काहुके बल गये सब इंद्रिनतें।
टूटे दसन बचन नहिं आवत सोभा गई मुखनतें॥
कफ पित बात कंठपर बैठे सुतहिं बुलावत करतें।
भाई-बंधु सब परम पियारे नारि निकारत घरतें॥
जैसे ससि-मंडल बिच स्याही छुटै न कोटि जतनतें।
तुलसिदास बलि जाऊँ चरनते लोभ पराये धनतें॥

हम लोगों का मेरापन नहीं जाता है, यह मेरेपन की आदत सबमें है। बेटे में है, बेटी में है, स्त्री में है, पति में है, साधु में है, सन्त में है। बेटा-बेटी कहते हैं – 'ये मेरी माँ है, ये मेरा बाप है। बाप कहता है - ये मेरा बेटा है, मेरी बेटी है।' स्त्री कहती है – 'मेरा पति है', पति कहता है – 'मेरी स्त्री है।' साधु-संत लोग कहते हैं – 'ये हमारी कुटिया है, हमारा आश्रम है, हमारा चेला है, हमारी चेली है।'

यह ममता कभी नहीं जाती है। मेरा मान-सम्मान हो, ये सूक्ष्म

ममतायें हैं। घर छोड़ा, परिवार छोड़ा, यह स्थूल ममता छोड़ी है परन्तु सूक्ष्म ममता है - हम अपने मान-सम्मान को रखते हैं। बाल पक गये, बुड्ढे हो गए, मरने के किनारे जा रहे हैं लेकिन ममता नहीं गयी, ममता में ही मर रहे हैं। ममता क्या है? **'एकादशं स्वीकरणं ममेति'** किसी चीज को अपनी मान लेना कि यह मेरी है, उसी को ममता कहते हैं। मेरा मित्र है, मेरा भाई है, मेरा शरीर है, मेरापन जहाँ है वो ममता है। इसलिए ममता की आदत छोड़ दो। जब ममता छूट जायेगी तो समझो भगवान् की सच्ची कृपा हो गयी। ब्रह्मा जी ने कहा है -

येषां स एव भगवान् दययेदनन्तः
सर्वात्मनाऽऽश्रितपदो यदि निर्व्यलीकम् ।
ते दुस्तरामतितरन्ति च देवमायां
नैषां ममाहमिति धीः श्वश्रृगालभक्ष्ये ॥

(भा. २/७/४२)

अनन्त भगवान् जब दया करता है तब यह अहंता-ममता जाती है। थोड़ी दया से ममता नहीं जाएगी, *'सर्वात्मनाऽऽश्रितपदो यदि निर्व्यलीकम्'* तुमने यदि निष्कपट भाव से भगवान् की शरण ली, तब वह अनन्त कृपा मिलेगी और तुम माया को पार कर जाओगे। फिर इस गंदे शरीर में हमारी ममाहम् बुद्धि नहीं रहेगी। यह दुर्गन्धपूर्ण मल-मूत्र का पिण्ड, कुत्ते और सियारों का भोजन है, मुर्दे को पटक आओ तो कुत्ते खाते हैं, सियार खाते हैं।

【10】

प्रह्लाद जी ने कहा है कि सन्तों का संग, भक्तों का संग सबसे बड़ा तीर्थ है। किसी तीर्थ में जाने की आवश्यकता नहीं है न गंगा, न गोदावरी, न प्रयाग, न तीर्थराज। रामायण में भी कहा गया है।

मुद मंगलमय संत समाजू ।
जो जग जंगम तीरथ राजू ॥

(रा.च.मा.बाल. २)

चलते-फिरते तीर्थ हैं, भक्त लोग। उस तीर्थ में तो गाड़ी से किराया लगाकर जाओ, जड़ है, एक जगह पड़ा हुआ है। भक्त रूपी तीर्थ तो चलते-फिरते सच्चे तीर्थ हैं। सच्चे तीर्थ हैं, क्यों? उन तीर्थों में जाओगे मेहनत करके, पैसा देकर, किराया-भाड़ा लगाकर तो भी सारे पाप नहीं जलते हैं। कुछ शरीर के पाप जल जाते हैं लेकिन मन के पाप नहीं जलते, कभी नहीं जलते और सन्तों के पास जाने पर शरीर के पाप तो जलते ही हैं, मन के पाप भी जलते हैं। प्रह्लाद जी ने कहा था -

यत्सङ्गलब्धं निजवीर्यवैभवं
तीर्थं मुहुः संस्पृशतां ही मानसम् ।
हरत्यजोऽन्तः श्रुतिभिर्गतोऽङ्गजं
को वै न सेवेत मुकुन्दविक्रमम् ॥

(भा. ५/१८/११)

भक्तों के पास जाओगे तो वहाँ भगवान् की लीला-कथाएँ सुनने को मिलती हैं और बार-बार वहाँ जाओगे तो हर समय भगवान् की चर्चा सुनने को मिलेगी। इससे भगवान् शीघ्र ही तुम्हारे हृदय में आ जाएँगे और मन के जो पाप हैं, वह आकर उन्हें साफ कर देंगें। जब भगवान् की कथा सुनते हो, भगवन्नाम सुनते हो, तो भगवान् कानों से घुसते हैं और हृदय में आ जाते हैं, वहाँ जो तुम्हारे मन के पाप हैं लाखों जन्म के, अनगिनत जन्म के जमा हैं, उन्हें हर लेते हैं।

【11】

श्रीमद्भागवत में इस संसार को एक प्याऊ कहा है। 'प्याऊ' जहाँ पथिक (मार्ग में जाने वाले) लोग रुककर पानी पीते हैं और फिर अलग-अलग चले जाते हैं। इसी तरह से ये संसार, परिवार (माँ-बाप, स्त्री, पति, बेटा-बेटी...) इत्यादि प्याऊ पर एकत्रित भीड़ की तरह हैं, यहाँ कोई अपना नहीं है; सब मरकर अलग-अलग चले जाते हैं।

भूतानामिह संवासः प्रपायामिव सुव्रते ।
दैवेनैकत्र नीतानामुन्नीतानां स्वकर्मभिः ॥

(भा. ७/२/२१)

जैसे कोई लड़की कहीं पैदा होती है और उसका विवाह अन्यत्र होता है, उसने न किसी लड़के को देखा, कहाँ का लड़का था? आकर पति बन गया, उसके लिए माँ-बाप को छोड़ देती है, सब कुछ छोड़ देती है और एक दिन जिसके पीछे सब कुछ छोड़ा, वह भी छूट जाता है, अकेले ही जाना पड़ता है इस संसार से। ये सब सम्बन्ध झूठे हैं, सच्चा सम्बन्ध एकमात्र भगवान् से है। इसलिए मीराबाई जी ने कहा –

तात मात भ्रात बंधु आपनो न कोई ।
मेरे तो गिरधर गोपाल दूसरो न कोई ।

जब बंग्लादेश अलग हुआ था हिन्दुस्तान से, तो एक भारतीय लड़की थी, वह बहुत बढ़िया गाती थी और सुन्दर भी थी, उसका विवाह हो चुका था तो वह बटवारे में बंग्लादेश में पहुँच गयी थी; उसने सोचा हम हिन्दू हैं, यहाँ से निकल चलें अपने देश में, परन्तु मुसलमान लोग होशियार थे, वे जानते थे कि यह लड़की भागेगी, इसलिए वे उस पर नजर रखते थे। एक दिन वह रात को अपने पति

को साथ लेकर चोरी से भागी हिन्दुस्तान के लिए, लेकिन मुसलमान लोग होशियार थे, उन्होंने रास्ते में उन दोनों को पकड़ लिया और उस लड़की के सामने ही उन लोगों ने उसके पति को काट डाला, तड़पा-तड़पाकर टुकड़े-टुकड़े करके काटा। उस लड़की ने इस दुःसह-दर्दनाक घटना को देखा और वह दुःख में पागल हो गयी। तो यही संसार है; वह पागल क्यों हुई? क्योंकि बड़ी बेरहमी से उसके पति को काटा गया था। इस संसार के सब सम्बन्ध झूठे हैं, कोई साथ नहीं जाता, सब अपने-अपने रास्ते चले जाते हैं।

【12】

जो स्वधर्म छोड़कर भगवान् के चरण कमलों की शरण में चला गया और किसी कारण उसका पतन हो गया तथा दूसरे वे जो भलीभाँति स्वधर्म का पालन कर रहे हैं, गृहस्थ की आसक्तियों में लगे हुए हैं; उन दोनों में श्रेष्ठ कौन है?

त्यक्त्वा स्वधर्मं चरणाम्बुजं हरे-
र्भजन्नपक्वोऽथ पतेत्ततो यदि।
यत्र क्व वाभद्रमभूदमुष्य किं
को वार्थ आप्तोऽभजतां स्वधर्मतः॥

(भा. १/५/१७)

किसी ने स्वधर्म का परित्याग कर दिया। जैसे माँ-बाप की सेवा करना धर्म है, पति की सेवा करना धर्म है, स्त्री का पालन करना धर्म है। साधु बनते हैं लोग तो सब कुछ छोड़ देते हैं। चैतन्य महाप्रभुजी अपनी पत्नी विष्णुप्रिया को छोड़ कर चले गए थे, जो महासती थीं। इसलिए कोई स्वधर्म छोड़कर भगवान् के चरणकमल का भजन करने लग गया और कहीं फिसल गया, जो साधन कर रहा था, वहाँ से गिर पड़ा, क्यों गिरा? क्योंकि 'अविपक्व' (कच्चा) था। फिर

गिरने के बाद उसका क्या होता है? गिर गया ठीक है, परन्तु उसका अमंगल नहीं होता है। अगर गिर गया तो भगवान् की दया से फिर उठ जाएगा, आज नहीं कल उठेगा, निश्चित उठता है। जैसे - छोटा बच्चा चलना सीखता है तो पहले सैकड़ों बार गिरता है, फिर उठता है। लोग साइकिल सीखते हैं, जाने कितनी बार गिरते हैं परन्तु एक दिन चलाना सीख जाते हैं। इसी तरह अगर गिरने के डर से चलना नहीं सीखते तो आज कैसे चल पाते? गिरता वही है जो चलना सीखता है। साधन करने वाला ही गिरता है, अगर गिरने के डर से नहीं चला होता, तो उसको ये सफलता नहीं मिलती।

इसलिए उन दोनों में जो स्वधर्म छोड़कर भगवान् का भजन कर रहा था परन्तु किसी कारण गिर पड़ा फिर भी वह श्रेष्ठ है। जिसने स्वधर्म का पालन किया कि हमारे माँ-बाप की आज्ञा है, हम विवाह करेंगे, माँ-बाप की आज्ञा पालन करना हमारा धर्म है, स्त्री सोचती है कि पति की सेवा करना हमारा धर्म है; तो स्वधर्म पालन से उनको क्या मिलेगा? कुछ नहीं; क्योंकि उसने धर्म पालन तो किया परन्तु भगवान् की शरण नहीं पकड़ी।

【13】

मनुष्य को सदा दीनता का व्यवहार करना चाहिए। कठोर व्यवहार असुर बना देता है। किसी को ज्ञान देना है तो नम्र बन कर दो। कठोरता करोगे तो अपराध लगेगा। वैष्णव पर प्रहार करोगे तो अपराध लगेगा। कोई साधक छोटा-सा भी है, उसे भी नम्रता से शिक्षा दो। हम लोग बहस करते हैं, लड़ते हैं, मारपीट करते हैं, ये सब अपराध है। मीठे बन कर सुधारो, चरणों में गिर कर सुधारो। इस तरह मनुष्य कटुता से, अपराध से बच जाता है। उसकी भक्ति उत्तरोत्तर बढ़ती रहती है। किसी साधक की भी निन्दा करोगे,

उसके साथ कड़ा व्यवहार करोगे तो उसका दण्ड भोगना पड़ेगा। इसी अपराध के कारण चित्त से काम, क्रोध कभी नहीं जाते, इसका बहुत बड़ा दण्ड मिलता है।

【14】

स्त्री का रूप दीपक की शिखा है और मनुष्य का मन पतंगा है जो उसके रूप में जा करके जल जाता है।

दीप सिखा सम जुबति तन मन जनि होसि पतंग ।
भजहि राम तजि काम मद करहि सदा सतसंग ॥

(रा.च.मा.अरण्य. ४६)

मनुष्य पाप करता है, पाप करना ही जलना है, उसके बाद नरक में यातना मिलती है। यहाँ भी जलता है, मरने के बाद भी जलता है। इसलिए अपना विनाश क्यों करते हो? काम-वासनाओं को छोड़कर फिर भजन करो। ये कोई भजन नहीं कि हम लोग भजन की आड़ में काम-वासनाओं का पोषण करें, ये और ज्यादा अपराध है। ऐसे लोगों को धर्म-ध्वजी कहा है। जो धर्म की आड़ में पाप करता है, उसका सिर काट देना चाहिए।

जैसे - स्त्री का शरीर पुरुष के लिए नारकीय है, वैसे ही पुरुष का शरीर भी युवती को नारकीय बना देता है। सांसारिक विषयजन्य कामनाओं को छोड़कर भजन करो। इसलिए साधक को सत्संग अवश्य करना चाहिए क्योंकि बिना सत्संग के इस मार्ग पर कोई चल नहीं सकता, सत्संग से एक प्रेरणा (भगवद्-चेतना) मिलती रहती है, निर्वेद मिलता है। जो सत्संग नहीं करता है, वह इस रास्ते पर चल नहीं पाता है।

【15】

भगवान की भक्ति जो भी करता है, उसके पास किसी भी प्रकार का संकट नहीं आ सकता।

अशेषसंक्लेशशमं विधत्ते गुणानुवादश्रवणं मुरारेः।
कुतः पुनस्तच्चरणारविन्द परागसेवारतिरात्मलब्धा ॥

(भा. ३/७/१४)

जितने प्रकार के क्लेश होते हैं, वे सब केवल भगवान् का गुणानुवाद श्रवण करने मात्र से शान्त हो जाते हैं। ज्यादा कुछ नहीं कर सकते हो तो कथा सुन लो और अगर भक्ति आ गयी तो फिर कहना ही क्या? संसार का ऐसा कोई कष्ट नहीं है जो भगवान् की भक्ति से दूर न हो जाए। कहीं भगवान के चरणों में रति हो गयी फिर तो क्या कहना? निश्चित रूप से समस्त कष्ट केवल कथा सुनने मात्र से चले जाते हैं।

शारीरा मानसा दिव्या वैयासे ये च मानुषाः।
भौतिकाश्च कथं क्लेशा बाधन्ते हरिसंश्रयम् ॥

(भा. ३/२२/३७)

शरीर की जितनी बीमारियाँ हैं, मन के रोग, दैवी-कोप, भौतिक-पंचभूतों के क्लेश, सर्दी-गर्मी या सांसारिक-प्राणियों द्वारा प्राप्त कष्ट, सर्प, सिंह आदि का भय; ये सब भगवान् के आश्रय में रहने वाले पर बाधा नहीं करते।

जब भगवान् का गुणानुवाद सुनने मात्र से किसी प्रकार का कष्ट नहीं आता फिर क्यों भक्त बीमार पड़ते हैं? उन्हें मुसीबत, दरिद्रता, अपमान आदि का सामना क्यों करना पड़ता है? फिर क्लेश क्यों आते हैं? ये शंका होना स्वभाविक है।

इसका उत्तर है कि मनुष्य को भक्ति का वास्तविक फल तभी

मिलता है जब हम किसी भी प्रकार का भक्तापराध न करें।

न भजति कुमनीषिणां स इज्यां
हरिरधनात्मधनप्रियो रसज्ञः ।
श्रुतधनकुलकर्मणां मदैर्ये
विदधति पापमकिञ्चनेषु सत्सु ॥

(भा. ४/३१/२१)

कोई कितनी भी आराधना कर रहा है, भजन कर रहा है लेकिन अगर अकिञ्चन भक्तों का अपराध करता है तो भगवान् उसके भजन को स्वीकार नहीं करते हैं। एक छोटे-से साधक-भक्त से भी चिढ़ते हो तो तुम्हारा सारा भजन नष्ट; फिर चाहे जप-तप कुछ भी करते रहो, उससे कुछ नहीं होगा क्योंकि भगवान् निर्धनों के धन हैं, गरीबों से प्यार करते हैं।

मनुष्य भक्तों का अपराध क्यों करता है? मद के कारण। विद्या का मद (ज्यादा पढ़ गया तो छोटे लोगों को मूर्ख समझने लगता है); धन का मद (धन-सम्पत्ति ज्यादा बढ़ गयी तो दीनों का तिरस्कार करता है); अच्छे कुल में जन्म का मद (ऊँचे कुल में जन्म हो गया तो अपने को सर्वश्रेष्ठ समझने लगता है और दीन-हीनों की उपेक्षा करता है); इसी तरह से कोई अच्छा कर्म कर लिया तो उसका मद, त्याग-वैराग्य कर लिया तो उससे मद हो जाता है, सांसारिक वस्तुओं में अहंता-ममता के कारण लोग ज्यादा अपराध करते हैं।

इसलिए अपराध रहित होकर भगवान् का भजन करो, फिर देखो चमत्कार; किसी भी तरह का संकट, क्लेश तुम्हें बाधा नहीं पहुँचा सकेगा।

【16】

मो मरने को नेम है, मरूँ तो प्रभु के द्वार ।
कबहुँ तो हरि पूछिहैं, कौन मर्‌यो मेरे द्वार ॥

ब्रजरज में ही शरीर छूटे, यह भगवान् की विशेष कृपा से होता है; नहीं तो बहुत से लोग ब्रजवास करने आते हैं और कुछ दिन रहकर चले जाते हैं। परन्तु जब कोई विशेष कृपा होती है तो गया हुआ भी लौटकर आ जाता है, जैसे सखीशरण जी।

सखीशरण जी के साथ जो घटना घटी, उन पर श्रीजी की कृपा हुई। उन्हें ब्रजवास करते हुए पचास साल से ज्यादा हो गए थे और जब वह बीमार हुए तो इलाज के लिए उनको बाहर हमने भेजा था कि अस्पताल चले जाओ। वह हमारी बात मानकर चले गये यद्यपि वह जाना नहीं चाहते थे, गहवरवन छोड़ना नहीं चाहते थे परन्तु हमारे कहने से वह अस्पताल गए और वहाँ उन्हें दस-पंद्रह दिन बीत गये, अचानक रात को एक दिन हमें उनकी याद आई कि सखीशरण नहीं आये। हमने फोन करवाया तो पता चला कि सुबह उनका इलाज होने वाला है। डॉक्टरों ने सुबह नौ बजे का समय दिया है। हमने कहा - उन्हें तुरन्त **बरसाना** लाओ। लोगों ने कहा कि रात को गाड़ी पर लाना मुश्किल है क्योंकि लंबा सफर है, लेकिन राधारानी ने कृपा की, वे गाड़ी से चल पड़े, यहाँ गहवरवन, बरसाना में रात्रि को एक बजे पहुँचे। गहवरवन पहुँचते ही खुश हो गये, समझ गये कि राधारानी का धाम आ गया, यहीं हम शरीर छोड़ना चाहते थे, उस समय माताजी गौशाला में राधा-नाम का कीर्तन हो रहा था। कीर्तन सुनते-सुनते उन्होंने शरीर छोड़ दिया। यह एक चमत्कार था।

अगर वहीं अस्पताल में उनका शरीर छूटता तो हम सारे जीवन पछताते क्योंकि इलाज के लिए हमने भेजा था। जिस आदमी ने

साठ साल ब्रजधाम में निवास किया कि हमें ब्रजरज मिल जाये, राधारानी का धाम मिले, उसको बाहर भेजने का कलंक मेरे ऊपर आता। परन्तु श्रीजी ने उनपर कृपा की, उससे पहले मेरे ऊपर की। यदि उनका शरीर यहाँ न पूरा होता तो हम सारे जीवन पछताते। एक संत जिसकी धाम निष्ठा थी, उसको हमने बाहर भेजा इलाज के लिए, दोषी हम माने जाते, लेकिन उनकी इच्छा पूरी हुई।

देखो, जो लोग यहाँ (ब्रजधाम में) निष्ठा के साथ रहते हैं (इस प्रण के साथ) कि मृत्यु-पर्यन्त मैं यहाँ रहूँगा, शरीर यहीं छोड़ूँगा। तो उसकी चर्चा निकुँज भवन में राधारानी श्रीकृष्ण से करती हैं –

श्री मद्वृन्दावन भुवि महानन्द साम्राज्य कन्दे
वन्दे यं कञ्चन विरचिता मृत्यु वास प्रतिज्ञम्।
श्री गान्धर्वा रसिकतिलकौ स्वेषु योग्यं यमेकं
ज्ञात्वान्योन्यं विमृशत इदं कीदृशोन्वेष भाव्यः॥

(वृन्दावन महिमामृत ६/३५)

श्रीजी पूछती हैं श्यामसुन्दर से, वह जो हमारी गलियों में पड़ा हुआ है, उसका क्या हाल है? तब श्यामसुन्दर बताते हैं – 'हे राधे! वह बेचारा ठीक चल रहा है, सतत् आपका संकीर्तन-आराधन करते हुए भिक्षा-वृत्ति से रहता है।' इसे सुनकर श्रीजी करुणातुर हो जाती हैं।

रामायण में गुसांई जी ने भी लिखा है –

चारि खानि जग जीव अपारा।
अवध तजें तनु नहिं संसारा॥

(रा.च.मा बाल. ३५)

यहाँ शरीर छोड़ने वाले का फिर संसार में जन्म नहीं होता। इसलिए धाम में भक्तजन, रसिकजन व्रत लेकर निष्ठा से रहते हैं। व्रत क्या है?

मरना तेरी गली में, जीना तेरी गली में ।
दिन रात बाट देखूँ, बैठा तेरी गली में ॥

यह ब्रजभूमि देवदुर्लभ है। यहाँ देवताओं का भी प्रवेश नहीं है, ब्रह्मा, शंकर आदि इस ब्रजभूमि को तरसते हैं, बड़े-बड़े देवताओं को भी यह दुर्लभ है। इसलिए यहाँ भक्तलोग निष्ठा से रहते हैं क्योंकि यहाँ भगवान् की प्राप्ति अवश्य होती है।

अतः प्रभु की विशेष कृपा है, जो हम लोगों को इस जगह ला दिया। बस जीवन भर इस आशा से इन गलियों में पड़े रहो कि एक दिन अवश्य प्रभु मिलेंगे।

【17】

तेरी कृपा का बयान क्या करें,
कृपा ही प्रलय है कृपा ही सृजन है ।

मनुष्य कुछ भजन-साधन न करे, सिर्फ भगवान् जो कर रहे हैं, उसमें संतुष्ट रहना सीख ले, इतने से ही भवसागर पार। श्रीमद्भागवत् में नारद जी ने ध्रुव को यही शिक्षा दी –

यस्य यद् दैवविहितं स तेन सुखदुःखयोः ।
आत्मानं तोषयन्देही तमसः पारमृच्छति ॥

(भा. ४/८/३३)

कुछ तपस्या मत करो, कुछ वैराग्य मत करो, बस जो कुछ सुख-दुःख मिला है, उसमें अपने-आपको संतुष्ट रखो, इतने से ही माया से पार हो जाओगे। ये भवसागर से पार होने का सरल उपाय है परन्तु ऐसा संतोष नहीं हो पाता। अगर सब कुछ भगवान् की कृपा मान लोगे, तो सीधे भगवान् के पास पहुँच जाओगे। जीवन भी कृपा है, मृत्यु भी कृपा है। भगवान् ने गीता में भी कहा है –

समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः ।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ॥

(गी. १४/२४)

दुःख-सुख को समान मान लो, स्वर्ण-मिट्टी को बराबर मान लो, मान-अपमान को बराबर मान लो। कोई निन्दा कर रहा है या प्रशंसा कर रहा है, उसे समान मान लो, तो इतने से ही माया से छूट जाओगे, गुणातीत बन जाओगे; लेकिन हम लोगों की आदत अनादिकाल से है - सुख में प्रसन्न होना, दुःख में रोना, जन्म-मरण आदि को बराबर नहीं समझना।

अगर अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थिति को समान मान लिया जाये तो भगवान् मिल जायें। इसलिए हर परिस्थिति को भगवान् की कृपा मान लो। नारद जी के चरित्र में आता है - जब नारद जी की उम्र पाँच वर्ष थी, उसी समय उनकी माँ की मृत्यु हो गयी तो उन्होंने माँ की मृत्यु को भी भगवान् की कृपा मान लिया –

तदा तदहमीशस्य भक्तानां शमभीप्सतः ।
अनुग्रहं मन्यमानः प्रातिष्ठं दिशमुत्तराम् ॥

(भा. १/६/१०)

उसको कृपा मानकर उत्तर दिशा की ओर चल पड़े, वहाँ प्रभु को बुलाने लगे, भगवान् की एक झाँकी दिखायी पड़ी, उसके बाद आकाशवाणी हुई – अभी तुम्हें साक्षात् दर्शन नहीं होगा, अगले जन्म में होगा।

एक पाँच साल का लड़का क्या तपस्या कर सकता था, सिर्फ इतना ही तप किया उन्होंने कि माँ की मौत को भी भगवान् की कृपा मान लिया।

【18】

चित्रकेतु के चरित्र में एक चमत्कार दिखा कि सत्संग कभी बेकार नहीं जाता है, कई जन्मों पहले किया हुआ सत्संग भी आदमी को उठा देता है। चित्रकेतु को सत्संग मिला था, जब उसका लड़का मर गया था, तब नारद जी और अंगिरा जी गये थे, उन्होंने उसे सत्संग दिया कि राजन्! भक्ति करो। जीवन-मरण तो लगा रहता है।

आगे चलकर पार्वती जी के शाप से चित्रकेतु असुर बना, नाम हुआ वृत्रासुर लेकिन उसकी भक्ति बनी रही क्योंकि पूर्वजन्म में उसने सत्संग किया था। सत्संग कभी न कभी अवश्य फल देता है। इसलिए जो लोग सत्संग करते हैं वे मर भी जाएँगे, चाहे दस जन्म भले ही लग जायें लेकिन यही सत्संग उनको उठा देगा। इसलिए सत्संग मोक्ष से बड़ा है।

तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग॥

(रा.च.मा.सुन्दर. ४)

एक लव (क्षण का 9वाँ भाग) का सत्संग भी मोक्ष से बड़ा है। मोक्ष से सत्संग इसलिए बड़ा है क्योंकि मोक्ष पाने के बाद मनुष्य को भगवान् की भक्ति नहीं मिलती और भगवान् की भक्ति में मोक्ष से करोड़ों गुना अधिक सुख है।

【19】

संसार में पुरुष स्त्री की जूठन चाटता है, स्त्री पुरुष की जूठन चाटती है। जूठन चाटना तो छोटी बात है। भोग में मनुष्य मल-मूत्र खाता है। सभी इन्द्रियाँ अपने विषयों को खाती हैं, पीती हैं; नीचे की इन्द्रिय मल-मूत्र को खाती है। हम लोगों का शरीर मनुष्य का है

लेकिन कुत्ते की तरह मल-मूत्र को खाते हैं। हर मनुष्य जो भोग-भोगता है, वह गधा है, कुत्ता है, सुअर है, ऊँट है क्योंकि भगवान् का नाम छोड़कर दिन-रात भोगों में घूमता है।

जिस पर भगवान् की कृपा हो जाती है वह फिर कभी किसी से मल-मूत्र अर्थात् भोग की भीख नहीं माँगता। जिसकी बुद्धि भगवान् में लग गयी फिर उसके मन में सांसारिक कामनाएँ पैदा नहीं होती हैं। जैसे अनाज को भून दो, उबाल दो फिर कभी उसमें अंकुर नहीं आता है। ऐसे ही भक्त के अन्दर कभी भोग की इच्छा नहीं आती है। इसलिए भोग की चाह जीवन में मत करना। कुत्ता, गधा मत बनो, भक्त बनो।

हम लोग जो भोग-भोगते हैं, वह विषय की काई मन में लिपट जाती है।

मुकुर मलिन अरु नयन बिहीना।
राम रूप देखहिं किमि दीना॥

(रा.च.मा.बाल. ११५)

जिसके मन में विषयों की काई है, उसको भगवान् नहीं दिखाई पड़ेंगे। इसलिए प्रभु से प्रार्थना करो, वे ही इन भोगों से बचायेंगे।

ये इन्द्रियाँ निरन्तर विषयों में जा रही हैं। जब आदमी को भूख लगती है, तब रोटी खाता है। वैसे ही जब उसे भोग की भूख लगती है, तब विषयों को भोगता है, भोगों की भूख के कारण ही स्त्री पुरुष के पास जाती है और पुरुष स्त्री के पास जाता है। क्यों? यह विषयों की भूख है, इसको परस्पर मिटाते हैं। इसलिए प्रभु से प्रार्थना करो कि हे प्रभो! तू इस भूख को हमेशा के लिए खत्म कर दे। मुझे पकड़ ले, मैं इधर-उधर विषय-भोगों में नहीं जाऊँ।

【20】

जब मौत आती है, प्राण छूटते हैं, तब कोई भी सम्बन्धी बचा नहीं सकता, मदद नहीं कर सकता। जिसका सारे संसार में शासन है, अरबों की सम्पत्ति है, लेकिन जब प्राण जायेगा तो कोई काम में नहीं आयेगा। इन बुड्ढों को देखो, कभी ये जवान रहे होंगे, वह जवानी कहाँ गयी? जवानी गयी, बुढ़ापा आया। थोड़ी देर में हम लोग भी इनकी ही तरह बुड्ढे हो जाएँगे, फिर मर जाएँगे, सब चले जायेंगे थोड़ी देर में। कोई आज जायेगा, कोई कल जायेगा, कोई परसों जायेगा। मरने के बाद शरीर को जला दिया जाता है, फूँक दिया जाता है। थोड़ा-सा जीवन था, उसको भोगों ने लूट लिया, विषयों ने लूट लिया। ये विषय खा गये सारा जीवन।

भगवान् ने यह मनुष्य शरीर इसलिए दिया कि तुम मेरी प्राप्ति करो लेकिन हमने आँख, कान, नाक आदि सभी इन्द्रियों को यहाँ तक कि रोम-रोम सब विषयों में लगा दिए।

तज दीन बंधु के चरन कमल, दुनिया के मुख देखा करते।
वे नर कैसे जो तज अमृत, विष खाकर गर्व किया करते॥

मिथ्या रूप देखकर ये बड़ी सुन्दर लड़की है, बड़ा सुन्दर लड़का है, बस इसी में जीवन चला गया। इस शरीर के भीतर केवल मल ही मल भरा है, बस केवल ऊपर से इसको चमड़े से ढक दिया गया है और उस चमड़े को देख-देखकर हम लोग मस्त हो जाते हैं। इस शरीर में हाड़ है, मांस है, मल-मूत्र है। मनुष्य हाड़-मांस का शरीर भोगते-भोगते मर जाता है लेकिन ये भोग नहीं छूटता, इसके भीतर केवल मल-ही-मल है और कुछ नहीं है। शरीर की दुर्गन्ध छिपाने के लिए लोग इत्र लगाते हैं। बाहर से कितनी भी खुशबू सूँघते रहो

परन्तु नीचे से गंदी हवा ही निकलेगी लेकिन फिर भी हम लोगों को वैराग्य नहीं होता।

चाहे कितनी अच्छी खीर बनाओ, हलुआ पूड़ी-कचौड़ी बनाओ, खाने के बाद वह सब मल बन जाता है। यह जिह्वा मिली थी भगवान् का नाम लेने के लिए लेकिन हम लोगों ने इसे विषयों का स्वाद लेने में लगा दिया।

इस नाक से भोगी भोग्या के शरीर को सूँघता है। पुरुष स्त्री के शरीर को और स्त्री पुरुष के शरीर को सूँघती है। इसीलिए भागवत में लिखा है कि वह जीते जी मुर्दा है जिसने भगवान् के चरणों में अर्पित तुलसी दल को नहीं सूँघा।

कान से मनुष्य जीवन भर विषयों के गीत सुनता है, उसी में जीवन चला जाता है। इन कानों को हमने साँप का बिल बना दिया। स्त्री-पुरुष एक दूसरे से विषय-वार्ता करते हैं, उनके कान साँप के बिल हैं।

इसी तरह हमने प्रत्येक इन्द्रियों को विषयों में लगा दिया। इस मन से जीवन भर भोग भोगे, इसलिए इसमें टट्टी-पेशाब भरे हैं और हमें उन्हीं की याद आती है, जागते हैं तो विषय दिखाई पड़ते हैं, सोते हैं तो विषयों के ही सपने आते हैं क्योंकि मन में विष्ठा-विषय भरे हुए हैं। मन में विषयों के ही संकल्प आते हैं और बुद्धि भी विष्ठा-विषयों से भर गई है, कभी पेट नहीं भरा विषयों से, मर जाएँगे लेकिन विषय नहीं छूटेंगे। भगवान् राम ने कहा – ऐसे लोग शठ हैं, जो सारा जीवन भोगों में नष्ट कर देते हैं और पाप कमाते हैं।

नर तनु पाइ बिषयँ मन देहीं।
पलटि सुधा ते सठ बिष लेहीं॥

(रा.च.मा.उत्तर. ४४)

【21】

किसी ने गाली दी, अपमान किया, कष्ट दिया, उसे सह लो। इतना ही नहीं, उस पर करुणा करो। ऐसा स्वयं भगवान् करते हैं, वैकुण्ठ में भगवान् लेटे हुए थे, वहाँ भृगु जी उनकी परीक्षा लेने गए और जाकर उन्होंने जोर से लात मारी भगवान् की छाती पर, प्रभु ने क्रोध नहीं किया बल्कि प्रसन्न होकर बोले – हे मुनिवर! मेरा वक्षस्थल बड़ा कठोर है और आपके चरण बड़े ही कोमल हैं, कहीं आपको चोट तो नहीं लगी, ऐसा कहते हुए भगवान् अपने हाथों से उनके चरणों को दबाने लगे –

अतीव कोमलौ तात चरणौ ते महामुने।
इत्युक्त्वा विप्रचरणौ मर्दयन् स्वेन पाणिना ॥

(भा. १०/८९/१०)

ऐसा स्तर भगवान् का है और वही वे हमसे चाहते हैं। जिसने अपराध किया, दुःख दिया उस पर करुणा करो, उससे मित्रता करो, संसार के सभी जन्तुओं के प्रति ऐसी समता रखोगे तो भगवान् और अधिक प्रसन्न होंगे।

【22】

हमारे मन में राग-द्वेष नहीं है, ऐसा जो कहता है, वह पक्का रागी है। हर आदमी यही कहता है कि हमारे हृदय में राग-द्वेष नहीं है। ऐसा कहने वाला ही अपनी अहंता में राग कर रहा है। सफाई देने की क्या जरूरत है? जो कहता है हम स्वच्छ हैं, साफ हैं, वह गलत है। अपने को स्वच्छ कहना अहंता से प्रेम करना है। जब अपनी अहंता में चोट लगी तब हम सफाई देते हैं, जहाँ सफाई दी जा रही

है, वहाँ गड़बड़ी है, अपनी अहंता में चोट पहुँची, वहाँ अहंता जीवित है और जब तक अहंता जीवित है, भगवान् नहीं मिलेंगे।

इसलिए भगवान् की कृपा जब होती है, तब इन सब मन के विकारों (अहंता, राग-द्वेष आदि) को जीव समझता है। किसी के समझाने से जीव समझ ही नहीं सकता।

【23】

केवल कृष्ण नाम, कृष्ण गुण, कृष्ण लीला ही गायी जाय और संसार के सब धर्मों को छोड़ दिया जाय, उसको अनन्य भक्ति कहते हैं।

भगवान् ने स्वयं गीता में कहा है –

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे॥
सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥

(गी. १८/६५, ६६)

एकमात्र मेरी शरण ले, मेरे में ही मन लगा, मेरा ही भक्त बन, दिन-रात मेरी ही सेवा कर, दिन-रात मेरी ही उपासना कर, मुझे ही नमस्कार कर, तब तू मुझे प्राप्त हो जाएगा। इस श्लोक में भगवान् ने स्वयं कहा - एकमात्र मेरी शरण में आ, मेरा ही नाम गा, मेरा ही गुण गा, मेरा ही कीर्तन कर, मेरी ही सेवा कर और सब संसार के धर्मों को छोड़ दे।

रसिकों ने भी यही कहा –

जाकी है उपासना, ताही की वासना,
ताहीकौ नाम, रूप, गुन गाइयै।

(व्यासवाणी)

सच्चा रास्ता यही है - जिसकी उपासना करते हैं, उसी की वासना करें, लड्डू-पेड़ा ये सब नहीं। केवल उन्हीं का नाम, उन्हीं का रूप, उन्हीं का गुण गाया जाय, यही अनन्य धर्म है, इसी को अनन्य भक्ति कहते हैं।

【24】

भगवान् दीनबन्धु, दीनानाथ हैं। इनको बुलाने का, रिझाने का, प्रसन्न करने का, एक ही रास्ता है – "हम लोग दीन बन जायें।" जब मनुष्य दीन बन जाता है, तभी प्रभु प्रसन्न होते हैं। लेकिन हर आदमी चोर है, बड़ा बनना चाहता है। ऊपर से हम लोग बात करते हैं दीनता की, लेकिन भीतर चोरी है, भीतर से चाहते हैं - हम बड़े बनें, लोग हमारा सम्मान करें। हम लोग सम्मान पाकर खुश होते हैं। ये चोरी है बड़ा बनने की सबके मन में।

इसलिए जिसको भगवान् की दया प्राप्त करनी है, दीन बन जाओ, छोटे बन जाओ, दुनिया में सबसे छोटे बनो। **'तृणादपि सुनीचेन'** तिनका से भी ज्यादा छोटे बनो, परन्तु हम लोग मूर्ख हैं, चोर हैं, बड़ा बनना चाहते हैं। इसीलिये संसार में हर प्राणी भटक रहा है, इस माया में पिस रहा है क्योंकि हर आदमी बड़ा बनना चाहता है, धन से, संपत्ति से, मान से, प्रतिष्ठा आदि से; इसलिए हर आदमी भिखमंगा है। कोई भी दीन नहीं बनना चाहता, सब लोग भिखमंगे हैं बड़प्पन के। भक्ति भगवान् की करते हैं लेकिन चाहते हैं, हमारा सबसे ज्यादा नाम हो, सम्मान हो, इसलिए कोई भी दीन नहीं बनना चाहता। यदि मनुष्य दीन बन जाए, छोटा बन जाए, तो निश्चित भगवान् की कृपा मिल जाएगी। नारायण स्वामी जी ने कहा है –

नारायन मैं सत्य कहौं, भुजा उठाय के आज।
जो तू बने गरीब तो, मिलें गरीब-निवाज॥

मैं हाथ उठाकर कह रहा हूँ, ये बात अकाट्य है, गरीब बनो तो गरीबनिवाज मिल जाएगा। सच्ची भक्ति तभी मिलेगी जब सच्चे मन से गरीब बनोगे।

【25】

प्रभु की शरण में जाने पर, यह विश्वास रखो कि काल कुछ नहीं कर सकता। काल सारे संसार को खा जाता है लेकिन भगवान् के भक्त पर उसका प्रभाव नहीं चलता है। बस शरण सही होनी चाहिए। सूरदास जी ने लिखा है –

जाकौं मनमोहन अंग करै।
ताकौ केस खसै नहिं सिर तैं, जौ जग बैर परै॥

केवल उन्होंने ही नहीं, वेद, पुराण, भागवत, गीता सब में यही लिखा है। श्रीमद्भागवत् में ध्रुव जी के चरित्र में लिखा है -

"मृत्योर्मूर्ध्नि पदं दत्त्वा आरुरोहाद्भुतं गृहम् ॥"

(भा. ४/१२/३०)

जब ध्रुवजी भगवद्धाम जा रहे थे, विमान आया था उन्हें लेने, उसी समय काल आया, हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और बोला कि संसार का यह नियम है, जो जाता है वह काल के आधीन होकर जाता है। लेकिन ध्रुव जी के आगे उसकी हिम्मत नहीं पड़ी, बैठ गया हाथ जोड़कर के। तब ध्रुव जी उस काल को सीढ़ी बनाकर, उसके मस्तक पर पाँव रखकर, जो अद्भुत विमान था उस पर चढ़कर जाने लगे। लेकिन एक और घटना घटी, जब वो विमान पर चढ़े, तो उनको अपनी माँ की याद आयी कि माँ की शिक्षा से ही हम भगवान्

की शरण में आए थे। ऐसी माँ कोई नहीं हुई, जो पाँच साल के बच्चे को जंगल में भेज दे। पाँच साल का बच्चा तो बहुत छोटा होता है। ध्रुव जी की माँ सुनीति ने जो हिम्मत की, वह संसार में कोई भी माँ नहीं कर सकती है। इसलिए उन्होंने अपनी माँ की याद की कि उसी की कृपा से हम आए भगवान् की शरण में और अब हम अकेले भगवान् के धाम में चले जाएँ, यह ठीक नहीं है। जब विमान पर चढ़ गए तो जो पार्षद लोग लेने आए थे, वे जान गए कि ध्रुव कुछ सोच रहे हैं, वे भी अन्तर्यामी होते हैं, जान गए कि क्या सोच रहे हैं? उस माँ की याद कर रहे हैं, जिसने जंगल में भेज दिया था छोटे से बालक को। तो उन्होंने कहा -

"दर्शयामासतुर्देवीं पुरो यानेन गच्छतीम् ॥"

(भा. ४/१२/३३)

"ध्रुव! तुम तो पीछे जाओगे, देखो, तुम से आगे जा रही है तुम्हारी माँ।'

इसलिए भगवान् की शरण में जो जाता है, उसके माता-पिता, पुरखों तक का कल्याण हो जाता है।

【26】

हम लोग भक्त नहीं हैं क्योंकि धन चाहते हैं, भोग चाहते हैं, मान-सम्मान चाहते हैं, इन चीजों को हर आदमी चाहता है, चाहे गृहस्थी है, चाहे साधु है; चाहे विद्वान् है लेकिन भगवान् गरीबों से प्रेम करते हैं।

नारायन मैं सत्य कहौं, भुजा उठाय के आज ।
जो तू बने गरीब तो, मिलें गरीब-निवाज ॥

गरीब बनो, सच्ची भक्ति तभी मिलेगी। सच्चे मन से गरीब बनो। लोग ढोंग करते हैं कि प्रभु! हमें कुछ नहीं चाहिए।

अरथ न धरम न काम रुचि गति न चहउँ निरबान ।
जनम जनम रति राम पद यह बरदानु न आन ॥

(रा.च.मा.अयो. २०४)

यह चौपाई सभी लोग कहते हैं, भाषण करते हैं लेकिन मन में चोरी रहती है कि हमें गरीब मत बनाना।

द्वारका जाते समय कुन्तीजी से भगवान् ने भेंट की और बोले – बुआ जी! अब तो तुम्हारे बेटे पाण्डव जगद्-विजयी बन गये हैं। बोलो, और कुछ चाहिए। कुन्ती बोलीं – हाँ कृष्ण, एक वर और चाहिए। कृष्ण ने पूछा – वह क्या है? वे बोलीं – तुम हमको अनन्तकाल के लिए दुःख, कष्ट, विपत्तियाँ दे जाओ क्योंकि उसमें तुम्हारा दर्शन होता है। इसलिए हमें शाश्वत अनन्तकाल तक कष्ट दो, मुसीवत दो, इसको कहते हैं भक्त।

क्या आज ऐसी हिम्मत है किसी में? हम लोग तो थोड़ी-सी विपत्तियों में घबड़ा जाते हैं, हम भक्त कैसे हो सकते हैं? इसलिए सच्चे मन से भगवान् से माँगो –

"हे दीनानाथ! हमें दीन बना, हमें गरीबी दे, हमें दुःख दे, विपत्तियाँ दे।

जब तुम दुःख माँगोगे, कोई कामना नहीं करोगे तो जो देवताओं को नहीं मिलती है **अविरल भक्ति**, बड़े-बड़े योगेश्वर जिसे चाहते हैं, वह भक्ति तुमको मिल जायेगी, लेकिन सच्चे मन से माँगो, चोर नहीं बनो। ऊपर से कह रहे हैं कि हमें दुःख दे और भीतर चोरी। भक्ति तो अपने-आप आयेगी, तुम्हारा दरवाजा खटखटायेगी - खोलो, मैं आ गयी हूँ। जब तुम निरपेक्ष बन जाओगे।

निरपेक्षं मुनिं शान्तं निर्वैरं समदर्शनम् ।
अनुव्रजाम्यहं नित्यं पूयेयेत्यङ्घ्रिरेणुभिः ॥

(भा. ११/१४/१६)

भगवान् ने भागवत में स्वयं कहा कि जो निरपेक्ष है, ऐसे भक्त के मैं पीछे चलता हूँ, क्यों? ताकि उसकी चरणरज मेरे सिर पर पड़े और मैं पवित्र हो जाऊँ। उस भक्त में ऐसी शक्ति आ जाती है कि वह भगवान् को भी पवित्र करता है। सारे संसार के पापों को भगवान् नष्ट करते हैं और उनके ग्रहण किये पाप को भक्त शुद्ध करता है। कैसा भक्त? जो कुछ नहीं चाहता। हम लोग चोर हैं। भीतर हमारे हृदय में कामनायें रहती हैं। अगर चोरी न रहे तो अभी भक्ति आ जायेगी।

नैरपेक्ष्यं परं प्राहुर्निःश्रेयसमनल्पकम् ।
तस्मान्निराशिषो भक्तिर्निरपेक्षस्य मे भवेत् ॥

(भा. ११/२०/३५)

जो निरपेक्ष है, निराशिष (कामना रहित) है, किसी से कुछ नहीं चाहता, न परिवार से, न संसार से, न माँ-बाप से, किसी से कुछ नहीं चाहता। उसके पास अपने-आप भक्ति आयेगी, बिना बुलाये आयेगी। चोरों के पास भक्ति नहीं आती है, जिसके मन में चोरी है कि हमको सुख मिले।

【27】

देखो, भगवान् के नाम में विश्वास हो जाना ही भगवान् को पाना है।

जिह्वा न वक्ति भगवद्गुणनामधेयं
चेतश्च न स्मरति तच्चरणारविन्दम् ।
कृष्णाय नो नमति यच्छिर एकदापि
तानानयध्वमसतोऽकृतविष्णुकृत्यान् ॥

(भा. ६/३/२९)

जिसकी जीभ भगवान् का नाम नहीं लेती है और जिसका मन भगवान् को याद नहीं करता है, वह सीधे मृत्यु के बाद अनन्तकाल

के लिए अन्धकार में चला जाता है। किसी को पता नहीं मरने के बाद हमलोग कहाँ जाएँगे? अन्धकार में भटक रहे हैं। इसलिए भगवान् का नाम दिन-रात लेना चाहिए। हर क्षण लेना चाहिए, एक क्षण भी भगवान् के नाम के बिना न जाए।

एक महात्मा थे, गंगा जी के किनारे गुफा में रहते थे, किसी से मिलते नहीं थे, एक बार कुछ संत उनका दर्शन करने गए। पहुँचे, वहाँ गुफा के दरवाजे पर बैठ गए और कीर्तन करने लग गए क्योंकि जो भगवान् के भक्त होते हैं, वे भगवान् के नाम से खिंचते हैं। निकलते तो नहीं थे वे गुफा से लेकिन ये लोग कीर्तन करते हुए बैठे रहे, तो वे बाहर आये और उन्होंने कहा - क्यों आये हो? लोग बोले – हम आपसे मिलने आये हैं, कुछ हमको उपदेश दीजिए। तो उन्होंने एक दोहा कहा और कहकर चले गए भीतर गुफा में। वह दोहा था –

कहत हौं कहि जात हौं, कहा बजाऊँ ढोल।
स्वासा बीती जात है, तीन लोक का मोल॥

जब मनुष्य मरने लगता है तो तीनों लोकों की सम्पत्ति दान कर दे या घूस दे दे लेकिन एक स्वाँस भी उसकी बढ़ नहीं सकती। गिनी हुई स्वाँसें मिली हैं, जिसको हमलोग संसार में, भोगों में खर्च कर देते हैं, तीन लोक की सम्पत्ति भी इसके सामने बेकार है। एक-एक स्वाँस भगवान् में लगा देनी चाहिए, चाहे तीनों लोक की संपत्ति मिल रही है उसको फेंक दो, तो उन्होंने यही उपदेश दिया कि एक-एक स्वाँस तीनों लोक की सम्पत्ति से बड़ी है, तीनों लोक की संपत्ति हम दे दें, फिर भी एक स्वाँस हम जिंदगी की बढ़ा नहीं सकते।

संसार में जितने बड़े-बड़े राजा लोग हुए हैं सब मर गए, एक स्वाँस भी कोई बढ़ा नहीं पाया, न रावण, न हिरण्यकशिपु। इसलिए

एक-एक स्वाँस जो खर्च हो रही है, इसे व्यर्थ मत जाने दो। दिन-रात हर स्वाँस भगवान् में लगा दो।

स्वाँस स्वाँस पर कृष्ण भज, वृथा स्वाँस जनि खोय ।
न जाने या स्वाँस को, आवन होय न होय ॥

【28】

हिरण्यकशिपु ने प्रह्लाद जी से पूछा कि क्या शक्ति है तेरे पास, जो तू आग में जलता नहीं है, समुद्र में डूबता नहीं है, अस्त्र-शस्त्र से मरता नहीं है।

जिसकी तपस्या की शक्ति से आकाश के तारे टूटने लगे, समुद्र खौलने लगा, पृथ्वी काँपने लगी, भूचाल आ गया, वह त्रिलोकविजयी हिरण्यकशिपु पूछता है -

प्रह्लाद सुप्रभावोऽसि किमेतत्ते विचेष्टितम् ।
एतन्मन्त्रादिजनितमुताहो सहजं तव ॥

(विष्णु. १/१९/२)

प्रह्लाद! तेरे अन्दर जो प्रभाव है, वह बड़ा सुदृढ़ प्रभाव है। क्या तूने जप किया है, क्या तप किया है? मैंने तो छत्तीस हजार वर्ष तक एक पाँव के अँगूठे पर खड़े होकर, आकाश की ओर मुँह करके मन्त्र जप किया। किन्तु तूने क्या किया है, मुझसे अधिक शक्ति तुझमें मालूम पड़ती है। तूने कुछ तो जरूर किया है, किस मन्त्र का जप किया है, क्या तप किया है? मेरे सामने ही तू पैदा हुआ, मेरे सामने ही पढ़ा-लिखा, कहीं जंगल में भी नहीं गया, फिर क्या तुझमें कोई स्वभाविक शक्ति है?

प्रह्लाद जी बोले –

न मन्त्रादिकृतं तात न च नैसर्गिको मम।
प्रभाव एषसामान्यो यस्य यस्याच्युतो हृदि॥

(विष्णु. १/१९/४)

हे तात! मैंने कोई तपस्या नहीं की, कोई मन्त्र नहीं जपा, न ही मुझमें कोई स्वाभाविक शक्ति या प्रभाव है। यह तो एक सामान्य-सा प्रभाव है। हर आदमी के अन्दर ऐसा प्रभाव आ सकता है। उसके लिए किसी तपस्या करने की जरूरत नहीं है, कोई मन्त्र जपने की जरूरत नहीं है, केवल अपने हृदय में भगवान् का स्मरण करो, प्रभु को हृदय में लाओ, बस।

परन्तु यह सुनने में तो आसान लगता है, जबकि सच्चाई यह है कि हमारे हृदय में संसार है, भगवान् नहीं हैं, भोग है, धन-संपत्ति है, संसार की चाजें हैं – लड्डू-पेड़ा, मल-मूत्र (मैथुन से प्राप्त भोग) आदि। मनुष्य बचपन से ही भोग सीख जाता है और वही उसके हृदय में रहता है। यदि भगवान् हृदय में आ जायें तो उसे संसार की कोई भी शक्ति हरा नहीं सकती।

【29】

देखो, भक्ति पाना है, तो छोटे बनो, दीन बनो, इससे निश्चित भगवान् मिलते हैं। भगवान् स्वयं छोटे बनकर शिक्षा देते हैं, जब पाण्डवों ने यज्ञ किया था तो –

'"गुरुशुश्रूषणे जिष्णुः कृष्णः पादावनेजने।"

(भा. १०/७५/५)

सबको सेवा मिली, गुरुजनों की सेवा अर्जुन को दी गयी और स्वयं सबसे छोटी सेवा चरण धोने, जूठी पत्तल उठाने की भगवान् ने ली।

सूरदास जी ने लिखा है –

"**राजसु-जग्य जुधिष्टिर कीन्हों तामें जूँठ उठाई।**"

संसार का स्वामी जूठी पत्तलों को अपने सिर पर रखकर ले जा रहा है। ऐसा उदाहरण कहीं नहीं है दुनिया में।

उसी को भक्त कहते हैं। जहाँ भी जाओ, दस आदमी काम कर रहे हैं तो जो बैठा-बैठा देखता है, वह भक्त नहीं है। जो लग पड़ता है सेवा में, वह भक्त है। यह भगवान् श्रीकृष्ण का आदर्श है, स्वयं सेवा किया उन्होंने, करके दिखाया। जो बैठा रहता है वह भक्त नहीं है, उसमें दीनता नहीं है, खुद लग पड़ो। चैतन्य महाप्रभु जी ने गुण्डीचा मंदिर साफ किया था, सबसे ज्यादा कूड़ा उन्होंने ही निकाला था, जो सेवा नहीं करता है, बैठा-बैठा देखता है, उसमें भक्ति नहीं है। सेवा करने वाले को लज्जा, संकोच, बड़प्पन, मान आदि ये सब छोड़ देना चाहिए। कूद पड़ना चाहिए मैदान में सेवा के लिए, उसी को भक्त कहते हैं, ये आदत जिसमें नहीं है, उसमें भक्ति न है और न कभी आयेगी। किसी के कहने से तब सेवा करने के लिए चले, वह भक्त नहीं है। जो स्वयं खड़ा हो जाता है सेवा के लिए, वो भक्त है, उसको भक्ति मिलेगी, भगवान् मिलेंगे।

【30】

दो बातन को भूल मत, जो चाहै कल्यान।
नारायन एक मौत को, दूजे श्री भगवान्॥

कल्याण चाहते हो तो दो बात कभी मत भूलो - एक तो मौत (मृत्यु); 'थोड़ी देर में हम लोग चले जाएँगे संसार से' ये सोचना चाहिए, न हमारे साथ स्त्री जायेगी, न बेटा, न बेटी, न मित्र, न धन, न सम्पत्ति, न मकान, न जमीन-जायदाद, सब यहीं रह जाएगा। ये सोचा करो कुछ देर बैठकरके कि हम मर गए, लेकिन ये आधी बात

है, इससे घबड़ाहट पैदा हो जायेगी, दूसरी बात है - भगवान् को सोचो।

भगवान् को सोचोगे तो कभी भय नहीं लगेगा, मनुष्य घबड़ाता क्यों है? क्योंकि भगवान् को भूल जाता है।

तावद्भयं द्रविणगेहसुहृन्निमित्तं
शोकः स्पृहा परिभवो विपुलश्च लोभः।
तावन्ममेत्यसदवग्रह आर्तिमूलं
यावन्न तेऽङ्घ्रिमभयं प्रवृणीत लोकः॥

(भा. ३/९/६)

हम ममता करते हैं, ये पैसा हमारा है, स्त्री हमारी है, यह मकान हमारा है, यह शरीर हमारा है क्योंकि हमने भगवान् को अपना नहीं माना है। भगवान् के चरण ही अभय हैं, यह हमेशा याद रहे, तो भय नहीं लगेगा, निर्भय पद प्राप्त कर जाओगे, कहीं ममता नहीं होगी।

क्या किसी को अपना बनाते हो? सभी चीजें छूटने वाली हैं, छूट रही हैं, यह शरीर भी एक दिन छूट जाएगा।

बुद्बुदा इव तोयेषु मशका इव जन्तुषु।
जायन्ते मरणायैव कथाश्रवणवर्जिताः॥

(भा. माहा. ५/६३)

गोकर्ण ने अपने पिता से कहा था कि पिताजी! जैसे पानी का बुलबुला फक्क फूट जाता है, ऐसे ही ये मनुष्य जीवन है। ये स्वाँस एक दिन जायेगी, फिर लौटेगी नहीं, मुँह खुला रह जाएगा। मुँह फट गया, साँस चली गयी, कभी नहीं लौटेगी। जैसे – मच्छर होते हैं संसार में, करोड़ों पैदा होते हैं, मर जाते हैं। ऐसे ही हम लोग हैं, बिना भगवान् के प्रेम के जी रहे हैं, मच्छर हैं, पानी के बुलबुले हैं, थोड़ी देर में फूट जाएँगे। इसलिए हर समय भगवान् का स्मरण करो, भगवान् की याद करो, एक क्षण भी इधर-उधर नष्ट मत करो।

【31】

देखो, इस मनुष्य शरीर का सिर्फ इतना ही फल है कि हम भगवान् की शरण में चले जाएँ और यदि भगवान् की शरण में नहीं जाते हैं तो हम आत्महत्यारे हैं, पशु हैं; गधे, कुत्ते से भी ज्यादा नीच हैं –

बड़े भाग मानुष तनु पावा ।
सुर दुर्लभ सब ग्रंथिन्ह गावा ॥
साधन धाम मोच्छ कर द्वारा ।
पाइ न जेहिं परलोक सँवारा ॥
सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोस लगाइ ॥

(रा.च.मा.उत्तर. ४३)

भगवान् ने कृपा करके देव दुर्लभ मनुष्य शरीर हमें दिया और फिर भी हम जैसे लोग कहते हैं - अरे भाई! भगवान् की कृपा नहीं है, कैसे भजन करें? केवल मिथ्या भगवान् को दोष देते हैं –

जो न तरै भव सागर नर समाज अस पाइ ।
सो कृत निंदक मंदमति आत्माहन गति जाइ ॥

(रा.च.मा.उत्तर. ४४)

जो मनुष्य शरीर पाकर भगवान की शरण में नहीं गया, वह आत्महत्या करने वाले से भी ज्यादा नीच है। किसी तरह से भी भगवान् की शरण पकड़नी चाहिए। इसलिए सत्संग किया जाता है क्योंकि भक्तों, साधु-संतों का संग करने से जीव को ज्ञान होता है और थोड़ी देर का भी सत्संग मनुष्य को भगवान् से मिला देता है।

【32】

मनुष्य जब पैदा होता है तो जन्म से ही जीवों का सहारा लेने लगता है, बचपन में माता-पिता का, बड़े होने पर स्त्री-पति का। मनुष्यों का सहारा लेने वाला अवश्य डूबता है, यही गलती आज तक हम लोगों ने की। संसार में हर आदमी भवसागर में डूब रहा है, ये जानते हुए भी जान-बूझकर हम डूबने वालों का ही सहारा लेते हैं? क्योंकि ये आदत अनेक जन्मों की है। यह मेरी माँ है, यह मेरा पिता है, ये मेरा भाई है, ये मेरी स्त्री है, ये मेरा बेटा है जबकि कोई अपना नहीं है। अपनापन छोड़ दो, भगवान् मिल जायेंगे।

अश्वत्थामा ने ब्रह्मास्त्र छोड़ा उत्तरा के गर्भ पर। उस ब्रह्मास्त्र से रक्षा करने वाला संसार में कोई नहीं था, न कोई देवता और न कोई मनुष्य। उत्तरा ने देखा कि सारा आकाश लाल हो गया है और ब्रह्मास्त्र उसकी ओर आ रहा है भस्म करने। वह दौड़ी, कहाँ गयी? जहाँ पाण्डव, व्यास जी तथा और भी बड़े-बड़े ऋषि-महर्षि बैठे थे। वहाँ जाकर उत्तरा न तो अर्जुन के पास गयी, न भीम के पास गयी। जाने कहाँ से उसको ज्ञान हुआ? सीधे भगवान् श्रीकृष्ण के पास गयी। श्रीकृष्ण सोचने लगे कि यह सीधे मेरे पास क्यों आयी है, जबकि इसे अर्जुन के पास जाना चाहिए था क्योंकि यह अर्जुन की पुत्रवधू है। हर मनुष्य पहले परिवार में सहायता माँगता है क्योंकि वहाँ उसका अधिकार होता है। लेकिन उत्तरा अर्जुन के पास नहीं गयी, भीम के पास नहीं गयी, सीधे भगवान् के पास गयी और बोली –

पाहि पाहि महायोगिन् देवदेव जगत्पते।
नान्यं त्वदभयं पश्ये यत्र मृत्युः परस्परम्॥

(भा. १/८/९)

हे प्रभु! मैं तुम्हारी शरण में आयी हूँ क्योंकि समस्त देवताओं के तुम देवता हो। सारे संसार के पति, रक्षक भी तुम्हीं हो।

हम लोग संसार में मरते हैं, क्यों? क्योंकि जीवों का आश्रय लेते हैं। 'ये मेरी माँ है, ये पिता है, ये पति है' इनका आश्रय लेते हैं, इसलिए मरते हैं। भगवान् का आश्रय नहीं लेते है।

मोर दास कहाइ नर आसा।
करइ तौ कहहु कहा बिस्वासा ॥

(रा.च.मा.उत्तर. ४६)

मनुष्यों की आशा करना, भगवान् से दूर जाना है। अपना रक्षक कोई नहीं है संसार में; न माँ है, न बाप है, न पति है, न पुत्र है। रक्षक तो केवल एक प्रभु श्रीकृष्ण हैं।

【33】

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पूरुषः ॥

(गी. ३/१९)

'भगवान् ने गीता में कहा – अर्जुन! तू निरन्तर आसक्ति से रहित होकर सदा कर्तव्यकर्म को भलीभाँति करता रह, क्योंकि आसक्ति से रहित होकर कर्म करता हुआ तू परमात्मा को प्राप्त हो जायेगा।'

आसक्ति छोड़करके कर्म करो निश्चित भगवान् मिल जाएँगे, कुछ साधन करने की आवश्कता नहीं, केवल आसक्ति छोड़ दो। बहुत से लोग कहते हैं कि हम घर-परिवार सब छोड़ आये, हमारी कहीं आसक्ति नहीं है। अरे, तुमने कुछ नहीं छोड़ा, आसक्ति यदि छूट जाए तो कामना ही नहीं पैदा होगी। आसक्ति से ही कामना पैदा होती है। *'संगात्सञ्जायते कामः'* आसक्ति हटी, काम मर गया। हमें भोग की इच्छा पैदा क्यों होती है? इन्द्रियासक्ति के कारण; हम

लड्डू-पेड़ा क्यों चाहते हैं, क्योंकि जिह्वा में आसक्ति है। अगर आँख खोलकर अपने जीवन में देखोगे तो पग-पग पर आसक्ति मिलेगी, खाने-पीने बैठने आदि सभी क्रियायों में। पुरुष स्त्री संग क्यों चाहता है? शिश्नेन्द्रिय में आसक्ति है, इसलिए काम पैदा होता है। अपमान हो गया तो बुरा लगा क्योंकि शरीर में आसक्ति है, किसी ने गाली दी, बुरा क्यों लगा? क्योंकि मल-मूत्र के पिण्ड इस शरीर में आसक्ति है। अगर आसक्ति नहीं है तो कोई विकार ही नहीं आयेगा, इसलिए अपनी आसक्ति को देखना, पकड़ना सीखो।

【34】

देखो, भगवान् की सेवा साक्षात् कहाँ मिलती है? जब भगवान् मिलें तो उनकी सेवा मिले लेकिन अगर उनके भक्तों की सेवा मिल जाए तो वो भगवान् की सेवा से भी बड़ी होती है। इसीलिए तुलसीदास जी ने कहा है –

अन्तर्यामी गर्भगत साधु सुन्दरी माँहि ।
तुलसी पोसे एक के दोनों पोसे जाँहि ॥

किसी स्त्री के गर्भ में कोई बच्चा है, उसकी तुम सेवा नहीं कर सकते हो क्योंकि वह पेट के भीतर गर्भ में है लेकिन अगर उसकी माँ को तुम खिलाओ-पिलाओ तो पेट में जो बच्चा है वह अपने आप पुष्ट हो जाएगा। ऐसे ही भक्त जो है वह गर्भिणी स्त्री की तरह है, उसके भीतर अन्तर्यामी रूप से पेट में भगवान् रहते हैं। इसलिए भक्तों की सेवा अगर कोई कर ले तो वो भगवान् की सेवा से भी बड़ी हो गयी।

भगवान् की सेवा करने वाले तो बहुत हैं परन्तु भक्तों की सेवा करना कठिन है क्योंकि भक्त भी मनुष्य होता है, मनुष्य शरीर में श्रद्धा रखना कठिन है। जैसे - साधु-संत हैं ये खाते हैं तो शौच भी

जाते हैं, भक्त लोग बीमार भी पड़ते हैं, खाँसी है, जुखाम है, बुखार है, प्राकृतिक शरीर की कमजोरियाँ भी दिखाई पड़ती हैं, फिर भी उनकी सेवा करना ये बड़ी बात है। भगवान् भक्तों की सेवा से बहुत ज्यादा प्रसन्न होते हैं।

देवगुरु वृहस्पति जी ने देवराज इन्द्र से कहा है –

सुनु सुरेस उपदेसु हमारा।
रामहि सेवकु परम पिआरा॥
मानत सुखु सेवक सेवकाईं।
सेवक बैर बैरु अधिकाईं॥

(रा.च.मा.अयो. २१९)

भगवान् ने भी कहा है – '**मद्भक्तपूजाभ्यधिका**' इसीलिये जो चतुर लोग होते हैं वे भगवान् को छोड़करके भक्तों की सेवा करते हैं ; चाहे वो कैसा भी भक्त है 'छोटा इत्यादि'।

तुलसी जाके बदन ते धोखेहु निकसत राम।
ताके पग की पगतरी मोरे तन को चाम॥

जिसके मुख से अगर धोखे से भी भगवन्नाम निकल जाए तो उसको भी भक्त मान लो और अपने शरीर का चमड़ा काट के उसके पाँवों की जूती बना लो। ये एक बहुत बड़ी बात है, ये अकाट्य सत्य है कि जो लोग भक्तों की सेवा करते हैं, उनके यहाँ सुख-सम्पत्ति की कमी कभी नहीं होती है, वे सदा फलते-फूलते हैं और भगवान् की कृपा प्राप्त करके भव सागर तर जाते हैं। इसी बात को दिखाने के लिए भगवान् स्वयं आते हैं, भक्तों की सेवा करते हैं, करके दिखाते हैं कि देखो, मैं भी भगवान् होकर भक्तों की सेवा करता हूँ, तुम भी सब करो। भगवान् ने स्वयं कहा कि मैं जो भगवान् हूँ, सेवा के कारण हूँ।

यत्सेवया चरणपद्मपवित्ररेणुं
सद्यःक्षताखिलमलं प्रतिलब्धशीलम्।

न श्रीर्विरक्तमपि मां विजहाति यस्याः
प्रेक्षालवार्थ इतरे नियमान् वहन्ति ॥

(भा. ३/१६/७)

भगवान् बोले - भक्तों की सेवा से ही हमारे चरणों में, चरण रज में पवित्रता आयी और सबके पाप जलाने की ताकत आयी। यद्यपि मैं विरक्त हूँ, लक्ष्मी जी को भी नहीं चाहता हूँ, जिनकी कृपा पाने के लिए लोग तपस्या करते हैं परन्तु सेवा के ही कारण से वह मेरे पीछे-पीछे घूमती हैं।

धर्मराज ने कहा है –

तैस्तान्यघानि पूयन्ते तपोदानजपादिभिः ।
नाधर्मजं तद्धृदयं तदपीशाङ्घ्रिसेवया ॥

(भा. ६/२/१७)

जप तपादि से पाप तो जल जाएँगे, लेकिन हृदय शुद्ध नहीं होगा। हृदय का मैल, बुद्धि का मैल अहंता आदि माला करने से नहीं जाएगा, तपस्या से नहीं जाएगा, ये तो भगवान् के चरणों की सेवा या भक्तों की सेवा से जाएगा। जहाँ सेवा है वहाँ चमत्कार है और सेवा नहीं है तो कितना भी तपस्या कर रहा है, जप कर रहा है, भजनानन्दी है, वो कुछ नहीं है सब व्यर्थ है।

भगवान् भी भक्तों की सेवा के लिए तरसते हैं; सेवा से भगवान्, भगवान् है। सेवा से भगवान् में शक्ति है।

【35】

सुनु सुरेस रघुनाथ सुभाऊ ।
निज अपराध रिसाहिं न काऊ ॥
जो अपराधु भगत कर करई ।
राम रोष पावक सो जरई ॥

लोकहुँ बेद बिदित इतिहासा।
यह महिमा जानहिं दुरबासा ॥

(रा.च.मा.अयो. २१८)

अगर भगवद् भक्तों में भेदभाव रखोगे तो भगवान् की क्रोधाग्नि से जल जाओगे। इसका सबसे बड़ा प्रमाण है महर्षि दुर्वासा। दुर्वासा जी से बड़ा कौन हो सकता है? वह साक्षात् शिव जी के अंश से उत्पन्न हुए हैं। परन्तु भक्त अम्बरीष का अपराध करने पर उनको भक्तापराध लग गया और उस अपराध के कारण सुदर्शन चक्र उन्हें मारने के लिए दौड़ा, जिससे उनका शरीर जलने लगा, वह सभी लोकों में भागे, देवलोक गए, ब्रह्मलोक गए, शिवलोक गए परन्तु किसी ने भी उनकी सहायता नहीं की, तब अंत में वैकुण्ठ धाम में भगवान् के पास पहुँचे और बोले – हे दीनानाथ! रक्षा करो, रक्षा करो। भगवान् बोले – दुर्वासा जी! आपने हमारे भक्त अम्बरीष का अपराध किया, इसलिए मैं आपको क्षमा नहीं कर सकता हूँ क्योंकि मैं स्वतन्त्र नहीं हूँ, मैं भक्तों के आधीन हूँ -

अहं भक्तपराधीनो ह्यस्वतंत्र इव द्विज।
साधुभिर्ग्रस्तहृदयो भक्तैर्भक्तजनप्रियः ॥

(भा. ९/४/६४)

भक्तापराध के कारण भगवान् ने दुर्वासा जी को भी लौटा दिया और हम कीड़े-मकोड़े जैसे लोग अपने-आप को सिद्ध समझते हैं, भक्तों की आलोचना करते हैं, निंदा करते हैं, भक्तों को भेद बुद्धि से देखते हैं, तो हम भगवान् की क्रोधाग्नि से कैसे बच सकते हैं? जब शंकर के अवतार दुर्वासा एक वर्ष तक चक्र की अग्नि में जलते रहे। इसलिए चाहे भजन कम करो लेकिन भक्तापराध से बचो। नहीं तो नष्ट हो जाओगे।

【36】

ये दारागारपुत्राप्तान् प्राणान् वित्तमिमं परम् ।
हित्वा मां शरणं याताः कथं तांस्त्यक्तुमुत्सहे ॥

(भा. ९/४/६५)

जो मनुष्य अपनी स्त्री, बेटा-बेटी, माता-पिता, घर-मकान, प्राण (जीवन), धन-संपत्ति तथा यह सारा संसार और परलोक छोड़कर एकमात्र भगवान् की शरण में जाता है उनको कहते हैं सच्चा अनन्य भक्त। हम लोग साधु बनकर भी धन रखते हैं तो अनन्य कहाँ से हो जाएँगे? भगवान् के अलावा अन्यत्र कहीं भी प्रेम है तो हम अनन्य नहीं हैं; संसार में व्यवहार रखते हैं, संसार से सुख की आशा रखते हैं तो अनन्य नहीं हैं। अनन्यता क्या है? इसको लोग समझ ही नहीं पाते। किसी सम्प्रदाय विशेष में दीक्षा लेना अनन्यता नहीं है। समस्त लौकिक-पारलौकिक कामनाओं तथा देह-गेहादि की आसक्तियों का त्याग करना अनन्यता है। 'स्त्री-पुत्र, धन-सम्पत्ति, शरीर आदि के प्रति प्रेम का त्याग करना' यह अनन्यता है।

अब हम अपने-आप को अनन्य बताते हैं और दूसरी तरफ हमारा चिंतन चल रहा है कि कहाँ से रुपया-पैसा मिले? बढ़िया भोजन लड्डू-पेड़ा कैसे मिले? मान-सम्मान कैसे मिले? समाज में हमारा प्रभाव किस तरह बढ़े? तो ऐसे व्यक्ति को अनन्य नहीं कहा जाता है। चिन्तन अनन्य होना चाहिए, वही सच्ची अनन्यता है। बहुत से लोग अपने-आपको राधारानी का भक्त मानते हैं किन्तु अगर तुम्हारा प्रेम घर-परिवार, धन-संपत्ति में है तो तुम राधारानी के भक्त नहीं हो। `राधासुधानिधि' में लिखा है कि राधारानी का प्रेम कब मिलता है?

"दूरादपास्य स्वजनान्सुखमर्थकोटिं
सर्वेषु साधनवरेषु चिरं निराशः ।"

(रा.सु.नि. ३२)

जब स्वजन-सम्बन्धी, स्त्री, पुत्र, माता-पिता आदि का दूर से त्याग कर दो, करोड़ों प्रकार के अर्थों का त्याग कर दो, धन-सम्पत्ति, जमीन-जायदाद आदि में भी प्रेम नहीं करो, अन्य साधनों से भी निराश हो जाओ, उसके बाद तुम राधारानी की चरणरज के उपासक बन पाओगे। अगर इन सब चीजों का संग्रह है तो तुम अनन्य नहीं हो।

【37】

श्रीमद्भागवत में कथा आती है - दधीचि ऋषि के पास देवता गए और उनसे प्रार्थना की कि आप अपना शरीर दे दो, आपकी हड्डियों से हम वज्र बनायेंगे। उन्होंने कहा - ले लो। उन्होंने ये नहीं सोचा कि हमारी स्त्री गर्भिणी है। गर्भिणी को छोड़कर हम चले जाएँगे तो उसका क्या होगा? उन्होंने देवताओं को शरीर दे दिया। स्त्री महासती थी, वह विधवा हो गयी। दधीचि जानते थे कि यह महासती है, हम इसको गर्भावस्था में छोड़कर जा रहे हैं, हमारे जाने के बाद यह जीवित नहीं रहेगी। अब शंका हुई कि तो क्या उन्होंने अन्याय किया? एक गर्भिणी स्त्री को छोड़ दिया। क्या यह क्रूरता नहीं है? नहीं, उसको हम जैसे मूर्ख लोग क्रूरता समझ रहे हैं। जबकि उन्होंने बहुत बड़ा धर्म किया, जो हर आदमी कर नहीं सकता। उन्होंने कहा है –

अहो दैन्यमहो कष्टं पारक्यैः क्षणभङ्गुरैः ।
यन्नोपकुर्यादस्वार्थैः मर्त्यः स्वज्ञातिविग्रहैः ॥

(भा. ६/१०/१०)

इससे ज्यादा कष्ट की बात क्या हो सकती है? प्रत्येक वस्तु पराई है, अपना शरीर, स्त्री का शरीर, बेटा-बेटी का शरीर आदि। सब क्षणभंगुर हैं, थोड़ी देर में सब चले जाएँगे।

आयेगा जब बो परवाना उसी दम सबको जाना है ।
सुनो ये प्राण दुनिया में भला किसका ठिकाना है ॥

जब काल आता है तो वह ये नहीं देखता कि स्त्री रो रही है, बाप रो रहा है, माँ रो रही है, बस उसी समय चलो इसको कहते हैं क्षणभंगुर। सारा कुटुम्ब रो रहा है लेकिन काल किसी पर दया नहीं करता, इसी का नाम है काल। वो कुछ नहीं सोचता है कि बच्चा अनाथ हो जायेगा तो उसका क्या होगा? स्त्री विधवा हो जायेगी तो क्या होगा? इसलिए ये संसार क्षणभंगुर है, एक क्षण में छूट जाता है। यहाँ हर चीज विनाशी है, हर चीज परायी है। तुम रोते हो, शोक करते हो, गलती तुम्हारी थी, तुमने इस संसार को अपना मान लिया था। तुम्हारा पैसा चोरी हो गया तो चोर की गलती नहीं है, गलती है तुम्हारी जो तुमने उस पैसे को अपना माना। उसका दण्ड है कि तुम आँसू बहा रहे हो। यहाँ तक कि जब डाका पड़ता है तो लोग मर जाते हैं, उनका हार्ट फैल हो जाता है क्योंकि उन्होंने उस धन को अपना माना था। इसलिए स्त्री, बेटा-बेटी, धन-संपत्ति आदि ये सब पराये हैं, क्षण भंगुर हैं। परन्तु आश्चर्य है कि इनसे मनुष्य परोपकार नहीं करता है। जबकि इनसे कोई स्वार्थ नहीं निकालना है। न बेटे से स्वार्थ निकलेगा न बेटी से। नुक्सान भले ही कर दें। बेटा-बेटी आदि अगर भगवद् विमुख हैं तो हानि करेंगे। तुम अगर मरने के बाद ऊपर के लोकों में जा रहे होगे तो ऊपर से तुम्हारी टांग नीचे खींच लेंगे, नरक में ले जाएँगे। परन्तु लोग फिर भी हाय बेटा, हाय बेटी करते हुए मरते हैं। उनसे केवल हानि है, नुक्सान है लेकिन फिर भी मनुष्य उनको छाती से लगाता है। हर चीज पराई है, किसी भी लड़का-लड़की से माँ-बाप का स्वार्थ सिद्ध होने वाला नहीं है, केवल उनसे नुक्सान ही होगा। इसलिए दधीचि जी बोले कि बड़े दुःख की बात है मनुष्य अपने शरीर, बेटा-बेटी, स्त्री आदि से परोपकार नहीं करता है।

राधे किशोरी दया करो

हे किशोरी राधारानी! आप मेरे ऊपर दया करिये। इस जगत में मुझसे अधिक दीन-हीन कोई नहीं है अतः आप अपने सहज करुण स्वभाव से मेरे ऊपर भी तनिक दया दृष्टि कीजिये।

राधे किशोरी दया करो।
हम से दीन न कोई जग में, बान दया की तनक ढरो।
सदा ढरी दीनन पै श्यामा, यह विश्वास जो मनहि खरो।
विषम विषय विष ज्वाल माल में, विविध ताप तापनि जु जरो।
दीनन हित अवतरी जगत में, दीनपालिनी हिय विचरो।
दास तुम्हारो आस और (विषय) की, हरो विमुख गति को झगरो।
कबहुँ तो करुणा करोगी श्यामा, यही आस ते द्वार पर्यो॥

मेरे मन में यह सच्चा विश्वास है कि श्यामा जू सदा से दीनों पर दया करती आई हैं। मैं अनादिकाल से माया के विषम विष रूपी विषयों की ज्वालाओं से उत्पन्न अनेक प्रकार के तापों की आग में जलता आया हूँ। इस जगत में आपका अवतार दीनों के कल्याण के लिए हुआ है। हे दीनों का पालन करने वाली श्री राधे! कृपा करके आप मेरे हृदय में निवास कीजिये। मैं आपका दास होकर भी संसार के विषयों और विषयी प्राणियों से सुख पाने की आशा किया करता हूँ। आप मेरी इस विमुखता के क्लेश का हरण कर लीजिए। हे श्यामा जू! जीवन में कभी तो ऐसा अवसर आएगा जब आप मेरे ऊपर करुणा करेंगीं, इसी आशा के बल पर मैंने आपके द्वार पर डेरा जमा लिया है।